आरएनआई पंजीयन RAJHIN/2016/72902

डाक पंजीयन RJ/UD/29-150/2017-2019

शब्द रंजन

संस्थापक एवं संरक्षक डॉ. महेन्द्र भानावत

विचार एवं जन संवाद का पाक्षिक

वर्ष 3 | अंक 20 | उदयपुर गुरूवार 01 नवंबर 2018 | पेज 8 | मूल्य 5 रू.

दीवाळी रै काज घड़ल्यो घूमेळाजी घूमेळा

- डॉ. महेन्द्र भानावत -

होली और दीवाली, ये दो ऐसे फसली त्यौहार हैं जो हर वर्ग का प्रतिनिधित्व लिये अपने में कई सन्दर्भ-सूत्र पिरोये हैं। जैसे होली के साथ गणगौर त्यौहार जुड़ा हुआ है वैसे ही दीवाली त्यौहार के साथ दशहरा जुड़ा हुआ है। फसल की पकाई पर ये दोनों ही त्यौहार बड़े जोश खरोश के साथ मनाये जाते हैं। होली पर जहां आग, राग, रंग और फाग की प्रधानता देखी जाती है वहां दीवाली पर सब तरफ प्रकाश ही प्रकाश विकीर्ण हुआ दिखाई देता है।

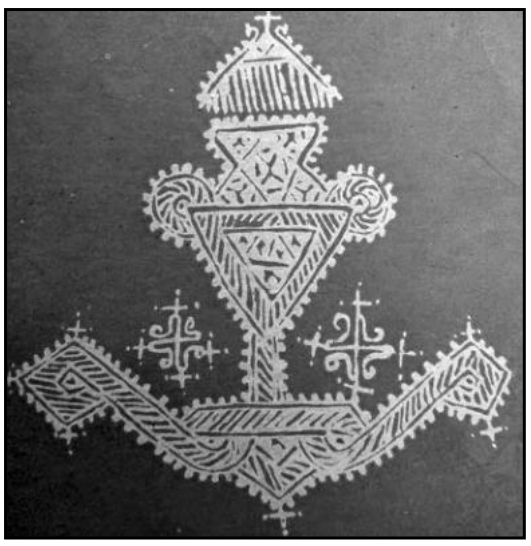

दीवाली अकेली नहीं :

यह दीवाली अकेली नहीं है। इसके ओरूंदोरूं धनतेरस, रूप चवदस, खेंकरा, रामासामा अथवा ल्होड़ी दीवाली जैसे त्यौहार जहां दीवाली को रिद्ध सम्पन्न पुष्ट करते हैं, वहां गृह-लिछमी और पशु-लिछमी के माहात्म्य को भी प्रकटित करते हैं। कितना वैज्ञानिक और लोकमत का व्यवस्थित आलोड़न-विलोड़न है इन त्यौहारों में! वर्षा ऋतु की भिंजाई से सारा जीवन पचपचा हो जाता है। सारा वातावरण संदवाया सा हो जाता है। खाद्यानों कपड़ों-लत्तों तथा गृह-दीवारों पर नानाप्रकार के जीवधारी लग जाते हैं। इसलिए घर के प्रत्येक द्वार, दीवाल, खूंट, आंगन, छज्जे की देखभाल तथा सफाई सुथराई आवश्यक हो जाती है। इसलिए घर लीपे-पुते जाते हैं और देखते ही देखते नानाप्रकार के मांडनें मुलका पड़ते हैं।

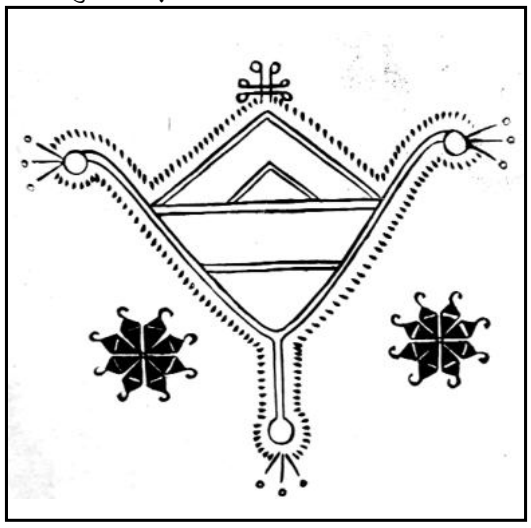

धनतेरस को धन-लिछमी का आगमन होता है। घर-घर में। मारवाड़ में ग्रामवधुएं धोरों की धवल रेत अपनी थालियों में भर-भर द्वार के सामने बिछा देती हैं ताकि रात को लिछमीजी जब पदापर्ण करें तो उन्हें कठोर धरती का कष्ट नहीं पहुंचे। वे होले-होले आयें और उनके पावन परस से रेत का प्रत्येक कण स्वर्ण बन जाए। रूप चवदस को सूर्योदय से पूर्व ही महिलाएं सिणगारित हों अपने बड़ों से पुत्रवती होने का आशीष मांगती हैं। इस समय नारियों के कौरकिनारीदार वस्त्रों तथा आभूषणों की छमछमाहट से सारा वातावरण ही छम्मक-छुम्मक हो उठता है। घर की लछमियां तो ये ही हैं। बड़े-बूढ़े इन्हीं बहुओं को आशीर्वाद देकर इन्हीं लिछमियों से साक्षात् लक्ष्मी पाते हैं। बहू ही घर की चानणी है। मंगल मांगल्य है। रिद्धि है, सिद्धि है। रूप और रूपांकन है। रंग और रास है। पुत्र-पुत्री से आंगन कुंवारा नहीं रहने की उम्मीद आश है।

दीपक - स्नेह, यश और अमरता का प्रतीक :

दीवाली आती है घने अंधकार में। इस घने अंधेरे में एक छोटे से दीपक की क्या बिसात ! पर वह जलता है मधुरे-मधुरे और दीप्त-प्रदीप हो उठता है। इस दीपक का जलना किसी को फूंक देना अथवा मटियामेट कर देना नहीं होता। यह तो स्नेह उड़ेलता है और इस स्नेह उड़ेलने के कारण एक से दूसरा और दूसरे से तीसरा ; इस प्रकार यह क्रम चलता रहता है। दीप से दीप जलने का, प्रकाशित होने का। एक परिवार का दीपक समस्त समाज, देश और देशान्तर को दीपित करता है। घना अंधेरा ज्योतिर्मय प्रकाश के रूप में फूट पड़ता है। तब लगता है जैसे धरा का प्रत्येक अंग-प्रत्यंग पीत प्रकाश से केशरिया गया है।

कितना आश उल्लास और उजास है इस त्यौहार में! अंधकार अज्ञान पर प्रकाश! ज्ञान का यह कमल-दीप हमारे समग्र कीचड़-कुकर्म को छेदित करने वाला है। अंधकार मृत्यु से लड़कर अमर जोत पाने का बहुत बड़ा संदेश है। इन दीपों का। ये दीये रात को जलकर प्रात: होते-होते देश के उन शूरवीरों में तेज यश हो जाते हैं जो रात-दिन देश की चौकसी करते तेजस्वी यशस्वी बने रहते हैं।

दीवाली के इन दीपों में जैसे जनसाधारण की मधुर मुस्कुराहट अपनी जगमगाहट और झिलमिलाहट से समस्त वसुधा को आलोकित कर रही हो अथवा गगनदेव ने अत्यंत प्रमुदित होकर धरती पर अपनी मुस्कान बिखेरी हो या लक्ष्मी रानी की साड़ी के बीच जैसे असंख्य सुनहली पक्की कोर की पंखुड़ियां आंखमिचौनी खेल रही हो या कि किसी दानी ने जैसे उजाले के कण बिखेर दिये हों; ऐसे ही कुछ विविध रूपों एवं रंगों में दीवाली के दीप तिल-तिल जलते, लुकछिप करते हमें दृष्टिगोचर होते हैं। कार्तिक के कृष्ण पक्ष में चार-पांच दिन के लिए दीवाली पाहुन बनकर आती है और धरा को सुवासित-सुगंधित एवं प्रकाशित कर हमें अंधकार से प्रकाश की ओर जाने का मार्ग बता जाती है।

हर्ष उल्लास एवं अनुपम आनंद लिये बालक-बालिका वर्ग में एक नया जोश उमड़ आता है। दीवाली के स्वागतार्थ एक पक्ष पहले से ही दीवाली के आने की खबर अपनी-अपनी टोलियों में नन्हें-नन्हें हमजोलियों के घर-घर में गीत गा-गाकर हंसते खेलते कूदते एवं नाचते हैं। बालकों में इस प्रकार के गाये जाने वाले गीतों को हरणी अथवा लोड़ी कहते हैं। टोली में सभी साथी स्वर में स्वर मिलाकर जब-

आंबा में तो तूंबोरे खेर्‌या में खजूरा।
लक्कड़दासजी कागज मेल्यो लिंबाड़े हजूर।
सल्ला सायजादी लोड़ी।
आंबो वद्‌यो भाई लाम्बो रे डाल गई गुजरात!
डाले लागी केर्‌यां रे खाईग्यो बदरीनाथ! सल्ला....
बदरीनाथ रा कोट कांगरा रे चित्तौड़्यो कुम्हार
चीतो आयो सांकड़े रे नार धड़ूकाले! सल्ला....
गीत गाते हैं तो लगता है गीतों के बोल स्वयं
रसीले-रसिये बनकर छैल-छबीली दीवाली की
आरती उतारने को उतारू हो रहे हैं।
मक्की माता गणी पाकी रे घट्‌टी घमोड़ा खाय
पीसना वाली पातली रे नतरा सोठा खाय। सल्ला..
खेताखेड़े वणो वायो रे मनकी नींदवा जाय
म्हारो बेटो ऊंदरो रे दानगी देवा जाय! सल्ला...

कपास बोकर बिल्ली द्वारा नींदना (खेत की सफाई करना) और चूहे द्वारा दानगी (मजदूरी) देने की कितनी सुंदर कल्पना की गई है। बिल्ली और चूहों के इस प्रकार के आपसी स्नेह, सहायता और बंधुता से हमें यही सबक मिलता है कि जब इन पशुओं में भी इतनी घनिष्टता एवं भाईचारे का व्यवहार होता है तो फिर हम सभी मानव कहाने वाले, कंधों से कंधा मिलाकर दीवाली के इस पुनीत यज्ञ में क्यों न हाथ बटायें! ऐसा स्नेह, सौहार्द्र, सहयोग, समरसता और सहिष्णुता का संदेश इसी दीप-पर्व को हाथ लगा है।

दीपदान की व्यापक परम्पराएं :

हमारे यहां कार्तिक के इस माह में दीपदान करने की परम्परा भी अति प्राचीनकाल से रही है। स्कंद पुराण तथा पद्‌म पुराण में इस माह में घी अथवा तेल के दीपक जलाने वाला अश्वमेघ यज्ञ करने का उल्लेख है। पुराणों में दुर्गम भूमि पर

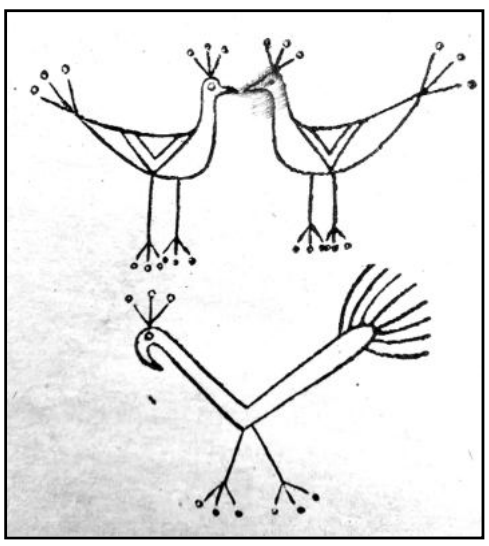

दीपदान करने का विधान भी मिलता है। इसी माह में लड़कियां-महिलाएं काति नहाकर अन्त में जलाशय के किनारे पानी में दीपक छोड़ती हैं।

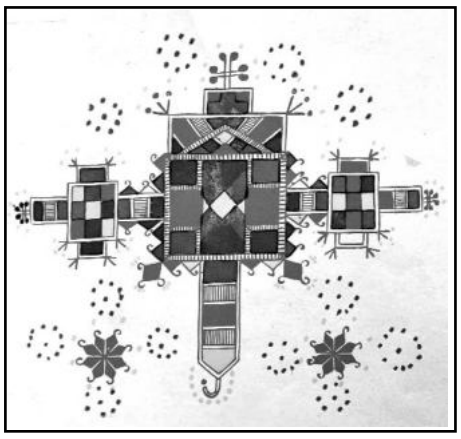

प्रत्येक देवी-देवता का आह्‌वान भी दीपक जलाकर ही किया जाता है। दीपक जलाकर रात जगाई जाती है। लक्ष्मी का आह्‌वान भी दीपक जलाकर ही किया जाता है। गजदीप नाम से राजस्थान में दीपदान की एक परम्परा रही है। किसी अपिरिचत के पथ को आलोकिक करने के अभिप्राय से आकाशदीप और पंछीदीप प्रज्वलित किया जाता है।

कार्तिक की अमावस्या की दीवाली के दीपों के साथ-साथ व्याघ्र, वृषभ, गरूड़, गुरु तथा वृक्ष दीपदान किया जाता है। इसी माह बलि ने विष्णु का दीपदान किया तो वह सारे कष्टों से मुक्त हो स्वर्ग सिधार गया। मंदिरों में जहां वृक्ष न हो वहां काठ का प्रतीक वृक्ष बनाकर जलाया जाता है। मयूर की आकृति का दीपदान करने की परम्परा कश्मीर में पाई जाती है। उड़ीसा बंगाल की जनजातियों में तो एक-दूसरे के गले मिलते हुए सामूहिक नृत्यावस्था में प्रत्येक घर में दीप देने की परंपरा है। कितना महत्व, कितनी ममता-समता और कितना माहात्म्य है इन दीपों का!!

आदिवासियों तथा काश्तकारों में दीवाली का प्रारंभ खेत-देव खेतरपाल की पूजा से होता है। खेतरपाल के रूप में एक पतरे पर सिन्दूर लगा नींबू काट नारियल की धूप दे दी जाती है। रात को वहां दीपक कर दिया जाता है। चवदस को नमक, मिर्च, राई, फटे पुराने चीथड़े आदि सात प्रकार की चीजों को मिलाकर एक मटकी में डाल दी जाती है। यह मटकी गाजे-बाजे के साथ चौराहे पर छोड़ दी जाती है। विश्वास है कि ऐसा करने से भूत, प्रेत आदि के चक्कर से तो उन्हें मुक्ति मिलती ही है साथ ही वर्ष भर ही समग्र प्रकार की अलाय बलाय से भी वे बचे रहते हैं।

घुड़ला-घुड़ेलखां और घड़ल्या :

दशरावे से ही लड़कियां दीवाली के स्वागत में रात्रि को प्रत्येक घर-गली में घुड़ला फिराना प्रारंभ कर देती हैं। यह घुड़ला छेदवाली मटकी होती है जो दीपक लिये होती है। इसके चारों ओर के छेदों से भीतर रखे हुए दीये का प्रकाश बड़ा मधुर-मधुर टिमटिमाता हुआ परिलक्षित होता है।

- शेष पृष्ठ सात पर

पोथीखाना

आहार प्रबन्धन पर तीन पुस्तकें

आहार सभी प्राणियों की जीवनचर्या का प्राथमिक एवं प्रमुख अंग है। ग्रंथों तथा ऋषि-मुनियों ने इस पर बहुत कुछ कहा है। प्रकृति और पुरुष का सनातन शाश्वत सम्बन्ध कहा गया है। इस दृष्टि से विचार करें तो मनुष्य के लिए प्रकृति प्रदत्त बहुत सारी चीजें आहार के लिए अनुकूल हैं। हमारे यहां कहावत भी है- 'जैसा खावे अन्न, वैसा बने मन।' इसके अनुसार सभी ने शाकाहार को महत्व दिया है और मांसाहार को मनुष्य के लिए वर्जित माना है। वैज्ञानिकों ने तो बहुत पहले ही सिद्ध कर दिया कि मनुष्य के स्वस्थ तथा दीर्घायु के लिए शाकाहार ही सर्वोत्तम आहार है। यहां शाकाहार का महत्व बतातीं हाल ही में तीन पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

पहली पुस्तक 'आहार प्रबन्धन' नाम से मुनि मनितप्रभसागर की लिखी गई है। पुस्तक के प्रारम्भ में ही 'मंगलामृत' में आचार्य जिनमणिप्रभ सूरि

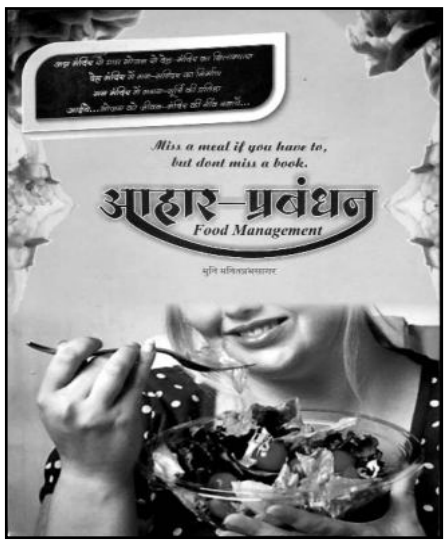

ने कुछ अत्यन्त ही उपयोगी एवं सार-संदर्भित बातें आहार के सम्बन्ध में कही हैं। वे लिखते हैं- 'जीवन बिना भोजन नहीं चलता। अनाहारी पद प्राप्त करने के लिए सतत प्रयत्नशील साधक आत्माओं को भी आहार तो ग्रहण करना ही होता है। भोजन से चार बातें जुड़ी हुई हैं इसीलिए रसोईघर को चौका कहा जाता है। ये चार बातें प्रश्नात्मक हैं- कब, कितना, कैसे और क्या। इन्हीं में आहार विज्ञान का पूरा रहस्य छिपा है। भोजन का सम्बन्ध सीधा शरीर से है पर मन समस्या करता है। इसे केवल स्वाद में रस है। शरीर की कोई फिक्र नहीं है बल्कि इसे आत्मा की ही चिन्ता रहती है। इसलिए वह आत्मा की शुद्धि के लक्ष्य से ही आहार ग्रहण करता है। भोजन यदि सुव्यवस्थित होता है तो न केवल वर्तमान बल्कि आने वाला जीवन भी सुखमय, आनंदमय और समाधिमय बन जाता है।

पुस्तक में अनेक तरह की बड़ी दिलचस्प बातें लिखी गई हैं जो चौंकाती हैं और हमारी बनीबनाई धारणा को तोड़ती हैं। अब तक हम यह सुनते आ रहे थे कि भोजन और भजन एकान्त में ही होना चाहिये जबकि इसमें अतिथि के साथ किये भोजन को अत्युत्तम कहा गया है और अकेले में किये गये भोजन को अधम श्रेणी का बताया गया है। परिवार के साथ किया गया भोजन उत्तम कोटि का है। इसी प्रकार पशु-पक्षी जगत की जानकारी में कहा गया है कबूतर रात को नहीं खाता। ऊंट नीम खाता है पर तम्बाकू कभी नहीं। गधे को कोई व्यसन नहीं और गाय सीधा तथा शाकाहारी प्राणी है। सर्वाधिक शक्तिशाली प्राणी हाथी और सबसे लम्बा शुतुर्मुर्ग भी मांस नहीं खाता। तोते सड़ा गला अनाज नहीं खाते।

स्वास्थ्य की दृष्टि से कौन सा आहार कब लेना चाहिये, इसकी अच्छी जानकारी दी गई है। दही, आचार के गुण, फलों के तत्व, व्यसन से हानियां, कब, कैसे, कितनी मात्रा में भोजन हो, भोज्य पदार्थों में निहित स्वाद सौंदर्य रस के तत्व, रोगी बनाने वाली सामग्रियां आदि पर अच्छी जानकारी दी गई है। पुस्तक में नारों के माध्यम से तथा चेतावनी देते भी व्यक्ति को सावधान किया गया है। जैसे खतरनाक जहरीला कोबरा जेब में रख लेना पर जेब में गुटखे जैसे नशीले पदार्थ मत रखना तथा मौज की बीड़ी, मौत की सीढ़ी और मजे की सिगरेट नरक गति का गेट। विविध रंगी चित्रों से युक्त बड़ी साइज की मोटे कागज पर 98 पृष्ठ की यह पुस्तक जिनक्रांतिसागरसूरि ट्रस्ट, जहाजमंदिर, पो. मांडवला-343042 से प्रकाशित 100 की बजाय 50 रूपये में उपलब्ध है।

दूसरी पुस्तक 'मानवता का सत्कार शाकाहार' नाम से जैन साहित्य-दर्शन के ख्यात विद्वान डॉ. दिलीप धींग की लिखी हुई है जो रिसर्च फाउण्डेशन फॉर

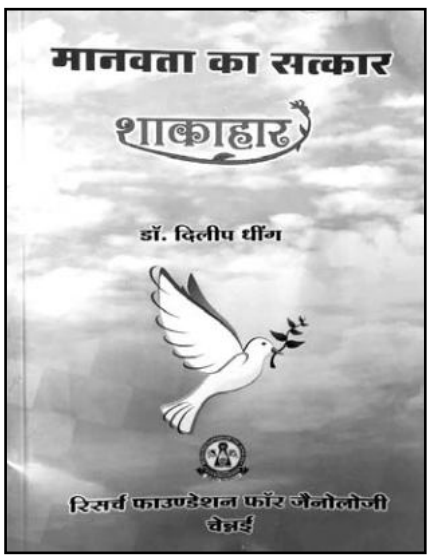

जैनोलॉजी, 18-रामानुजा अय्यर स्ट्रीट साहूकार पेट, चैन्नई-600079 से प्रकाशित है। फाउण्डेशन के महासचिव डॉ. सु. कृष्णचन्द्र चोरड़िया ने प्रारम्भ में प्रकाशकीय वक्तव्य में शाकाहार को निर्दोष मानवीय जीवनशैली बताते हुए अपने द्वारा इस क्षेत्र में किये गये कार्यों का उल्लेख किया और दुनिया में समस्त श्रेष्ठताओं की बुनियाद में शाकाहार को श्रेष्ठतम बताया।

डॉ. चोरड़िया की सबसे उल्लेखनीय देन चैन्नई में बनने वाले आधुनिक यान्त्रिक बूचड़खाने का जबर्दस्त विरोध करना रहा और उससे भी अति महत्वपूर्ण कार्य उस स्थान के नजदीक लगभग सौ एकड़ जमीन पर चन्दा प्रभु शाकाहार ग्राम बसाना है। उन्हें इसकी प्रेरणा इजराइल के टेलअविव में अप्रेल 1990 में आयोजित विश्व शाकाहार सम्मेलन में मिली जिसमें उन्होंने भारतीय शाकाहार सभा की ओर से प्रतिनिधि मण्डल के सदस्य के रूप में भाग लिया।

डॉ. दिलीप धींग ने अपने 45 आलेखों यथा- शाकाहार, पर्यावरण, व्यसन, आरोग्य, मांसाहार, गोपालन, आतिशबाजी, अहिंसा, विश्व शांति, प्राणी रक्षा, नशा से जुड़े विविध विषयों में बहुत ही उपयोगी और सारगर्भित बातें लिखी हैं। साथ ही इस क्षेत्र में जिन-जिन लोगों ने तथा संस्थाओं द्वारा विविध प्रवृत्तियों के माध्यम से जो उल्लेखनीय कार्य हुए, उनका भी उल्लेख यथास्थान कर दिया है। उल्लेखनीय पक्ष यह भी है कि पुस्तक में संकलित सभी लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित किये जाकर पाठकों द्वारा प्रशंसित हैं।

अपने लेखकीय में डॉ. धींग लिखते हैं- अहिंसा धरती के निवासियों के अस्तित्व का प्रमुख आधार है। मनुष्य के लिए शाकाहार अहिंसा की उपासना का पहला चरण है। शाकाहारी जीवनशैली मनुष्य के अनेक सद्गुणों की रक्षा करती है तथा अनेक सद्गुण विकसित करती है। आज देश-दुनिया में शांति और अहिंसा पर तो खूब चर्चाएं होती हैं लेकिन पशु-पक्षियों की नित्य नियोजित हत्याओं पर विशेष चर्चा या चिंता नहीं दिखाई पड़ती। यही वजह है कि समस्याएं अनेक रूपों में खड़ी हो रही हैं। आतंक, अनाचार, आक्रमण, युद्ध, प्रदूषण, खून-खराबा, दंगे, छीना-झपटी जैसी घटनाएं मानव सभ्यता के विकास पर अनेक सवाल खड़े करती हैं।

डॉ. दिलीप धींग जैनत्व के विद्वान ही नहीं, अपितु जैन धर्म की व्यावहारिक जीवनशैली के असल अध्येता तथा पालनहार प्रचेता भी हैं। यही कारण है कि उनकी लेखन-शैली, विषय-विश्लेषण तथा कथन-कसौटी में मानवीय मूल्यों की उदात्त परम्पराओं की पुष्ट दर्शना में दिव्य रूप रूपायित हुए मिलते हैं।

तीसरी पुस्तक 'शुद्ध अन्न स्वस्थ मन' नाम से प्रेमपाल शर्मा द्वारा लिखी गई है। स्वस्थ तन में ही स्वस्थ मन का निवास होता है। दुनिया में एक से बढ़कर एक बहुमूल्य चीजें हैं, परन्तु इनमें एक चीज सबसे अनमोल है, और वह है- उत्तम स्वास्थ्य। मनुष्य जब-जब प्रकृति के विपरीत जाता है, अपना खान-पान तथा दिनचर्या संयमित नहीं रख पाता है, तब-तब बीमारियों की पकड़ में आ जाता है। बीमारियां हैं तो उनका इलाज भी है। अनेक चीजों को हम नित्य खाते हैं, उपयोग में लाते हैं परन्तु उनके आरोग्यकारी गुणों के बारे में नहीं जानते। पुरातनकाल में अधिकतर बीमारियों का इलाज घर में ही कर लिया जाता था, ऐसा अभी भी सम्भव है।

पुस्तक में सर्व सुलभ अनाजों यथा- गेहूं, चावल, जौ, ज्वार, मक्का, बाजरा ; दालें- अरहर, उड़द, मूंग, मसूर, चना, मटर, मोठ, कुलथी ; तिलहन-सरसों, सोयाबीन, मूंगफली, तिल, नारियल, महुआ; दुग्ध के उत्पाद- दही, छाछ, मक्खन, घी तथा सिरका ; गुड़, फिटकरी, चन्दन, बर्फ, कपूर इत्यादि का सांगोपांग वर्णन है। प्रत्येक का आंचलिक नाम, गुणधर्म, सामान्य उपयोगों के साथ-साथ विभिन्न रोगों में उनके औषधीय उपयोग भी बताये हैं। पुस्तक के अन्त में उपयोगी परिशिष्ट जोड़े गए हैं।

सुधी पाठक इस पुस्तक से भरपूर लाभ उठाकर अपने घर-परिवार को निरोग कर पायेंगे। साथ ही सदियों पुरानी परम्परागत देसी-घरेलू चिकित्सा को पुनर्जीवित कर 'सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामया' के मन्त्र को सार्थकता प्रदान करेंगे। खान-पान और

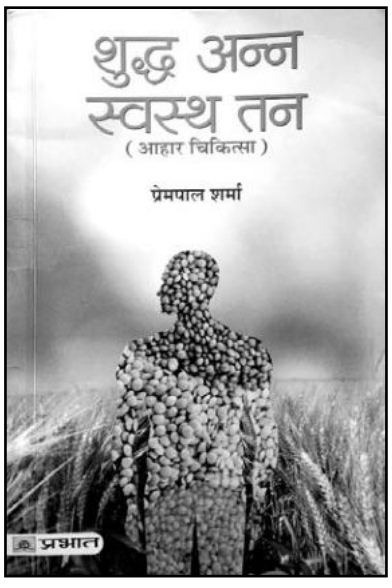

जीवनशैली को संयमित बनाकर उत्तम स्वास्थ्य का सूत्र देने वाली लोकोपयोगी यह पुस्तक प्रभात पेपरबैक्स, 4/19, आसफ अली रोड़, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित हुई है जो दो सौ रूपये में उपलब्ध है।

संपादक श्रीवास सम्मानित

हिन्दी साहित्य में अभूतपूर्व योगदान के लिए 'कला समय' के संस्थापक एवं प्रधान संपादक भंवरलाल श्रीवास को 'साहित्य श्री' सम्मान एवं 'संपादक रत्न' सम्मान से सम्मानित किया गया। यह सम्मान क्रमशः 9 सितम्बर को कोटा में भारतेन्दु समिति एवं 15 सितम्बर को श्रीनाथद्वारा में साहित्य मण्डल द्वारा प्रदान किया गया। उल्लेखनीय है कि 'कला समय' का प्रकाशन भोपाल से पिछले 21 वर्षों से द्वैमासिक के रूप में हो रहा है। कला एवं संस्कृति को समर्पित यह पत्रिका विद्वानों, शोधकर्मियों एवं कला-संस्कृति मनीषियों में अत्यन्त प्रिय है।

डॉ. दशोरा सेमीफाइनलिस्ट रहीं

दैनिक भास्कर एवं भारतीय स्किल डवलपमेंट युनिवर्सिटी, जयपुर की ओर से आयोजित राजस्थान के हुनरबाज-2018 की गोल्डन हुनरबाज केटेगरी की सेमीफाइनलिस्ट रही उदयपुर की डॉ. करूणा दशोरा।

कोमल वाधवानी सम्मानित

मध्यप्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा हिंदी भवन ,भोपाल में आयोजित हिन्दीसेवी सम्मान समारोह में वरिष्ठ साहित्यकार सिंधी भाषी हिन्दी लेखिका कोमल वाधवानी 'प्रेरणा' को सम्मानित किया गया। मुख्य अतिथि राजस्व मंत्री उमाशंकर गुप्ता द्वारा श्रीमती वाधवानी को उनके हिन्दी काव्य संग्रह 'नेह की बूँद' के लिए 'सैयद मीर अली मीर' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। पुरस्कार स्वरूप शॉल, श्रीफल, स्मृति चिन्ह व 2500/- रुपये की राशि प्रदान की गई।

खोज-खबर

समाधियां पशु-पक्षियों की

हमारा देश कई प्रकार की विचित्रताओं से भरापूरा है जिसकी सानी विश्व में अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलती, पर राजस्थान इन विचित्रताओं में अपनी विशिष्ट विलक्षणता लिए है। सतियों के स्मारक भी यहां पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। मानव हित के लिए किये गए विशिष्ट कार्यों के लिए यहां का मनुष्य किसी को आदर देने में कभी नहीं चूका। गांवों के देवरों में प्रतिष्ठित देवी-देवता और लोकजीवन में प्रचलित कथा-आख्यान, गीत-कथा इसके साक्षी हैं कि जिसने भी यहां पर हित के लिए प्राणों को उत्सर्ग कर दिया वह सदा-सदा के लिए अमर हो गया। यह बात मनुष्य के साथ ही नहीं, जानवर तक के साथ घटित हुई मिलती है।

किन्हीं जानवरों में मानवीय किंवा देवीय गुणों को परख कर तदनुसार उनके प्रति सम्मान व्यक्त करने की भी यहां बड़ी प्राचीन परम्परा रही है। कई सांडों, बन्दरों, गायों, कुत्तों, सांपों के ऐसे कथा-किस्से मिलेंगे जिनके सुकृत्यों के फलस्वरूप यहां के लोगों ने उनकी मृत्यु के पश्चात उनके स्मारक बनाये हैं। समाधियां खड़ी की हैं। बड़े-बड़े भोज दिये हैं। शव-यात्राएं निकाली हैं। बस्तियों का नामकरण किया है। मन्दिर प्रतिष्ठित किये हैं। हवन-कीर्तन किये हैं। जानवरों को भोजन पर न्यौता है और उनकी अस्थियां तक गंगाजी में प्रवाहित की हैं। इससे यह स्पष्ट है कि हमारे यहां गुण-पूजा को प्रधानता सदैव-सदैव दी जाती रही है चाहे वह जानवर भी क्यों न हों।

गाय को हमारे यहां माता कहा गया है। प्राचीन शास्त्रों में भी इसके कई उल्लेख मिलते हैं। बहिन-बेटी को शादी के पश्चात गाय दी जाती है। वछ बारस का त्यौहार ही गाय-पूजा का है। गायों के साथ-साथ बछड़ों का भी हमारे यहां बड़ा प्यार-आदर है। दीवाली पर हीड़ गाई जाती है जिसमें गो-पुत्र को सर्वाधिक महत्व-गौरव दिया जाता है। दीवाली के दूसरे दिन गांव-गांव बैलों की विशेष पूजा की जाती है। चोपों में गायें भड़काई जाती हैं और उन्हें लपसी-चावल का भोजन कराया जाता है।

जयपुर जिले के सुमेरपुर के निकटवर्ती गांव बीसलपुर में गाय-बछड़े का बड़ा भव्य मंदिर बनाया गया जिस पर 60 हजार रूपये खर्च किये गये। इस मंदिर के पीछे भी एक अजीब घटना-प्रसंग जुड़ा हुआ है। सन् 1974 की जलझूलनी एकादशी को इस गांव की महिलाओं ने पांच दिवसीय उपवास किया और एक गाय तथा बछड़े का पूजन किया। आखिरी दिन उपवास खोलने के एक घंटे पहले वह गाय मृत्यु को प्राप्त हुई। गांव वालों ने सोचा गाय बड़ी पुण्य वाली थी। पूर्व जन्म में उसके द्वारा किये गये अच्छे कार्यों के फलस्वरूप उसे महिलाओं का पूजापा मिला और उपवास के दौरान उसने शरीर छोड़ा अत: उसकी स्मृति को अमर रखा जाना चाहिये। इसी भावना ने वहां मंदिर का निर्माण कराया और उसमें गाय-बछड़े की पत्थर की बनी प्रतिमा प्रतिष्ठित की गई। आसपास के लोग आज भी बड़े श्रद्धाभाव से मंदिर के दर्शन करते हैं और गाय-बछड़े के प्रति सम्मान के भाव ग्रहण करते हैं।

गाय-बछड़े के साथ-साथ सांड को भी बड़ी पूज्य भावना से देखा जाता है। मारवाड़ में तो इन सांडों को लोग प्रतिदिन नियमित रूप से मिठाई आदि खिलाते भी देखे गए हैं। कभी किसी दुकान में यदि किसी सांड ने कोई चीज खा ली तो भी दुकानदार उसके प्रति बुरी भावना नहीं लाएगा। शेखावाटी के फतहपुर में तो सांड का एक स्मारक बना हुआ है जिसके साथ एक शिलालेख तक एक सेठ ले लगवाया था। कहते हैं, सांड की मृत्यु पर यहां के एक सेठ ने ऐसा मृत्युभोज किया जिसमें सात तरह की मिठाइयां बनवाई गई और सारे नगर को जीमने के लिए बुलाया गया। उसी समय एक बड़े चबूतरे पर सांड की मूर्ति स्थापित की गई और शिलालेख लगवाया गया जिसे आज भी पढ़ा जा सकता है। उस पर अंकित लेख इस प्रकार है-

श्री गणेशजी।। श्री गोपीनाथजी गुलराजजी सिंघानिया माह सुदी 12 शुक्रवार सं. 1930 श्रीजी सरण हुया उमर वर्ष 50 का जिकालर सांड छोड्यो जै सांड को स्वर्गवास हुयो भादवा सुदी 15 गुरूवार सं. 1945 न जै सांड को यो च्युतरो करायो।

कई जगह सांड की मृत्यु हो जाने पर उसकी गाजे-बाजे के साथ शव-यात्रा निकाली जाती है। ऐसी स्थिति में उसे कफन ओढ़ाकर भैंसागाड़ी में लादकर पूरे कस्बे में घुमाया जाता है। पुष्प गुलाल से उसे सम्मान-श्रद्धाभाव दिये जाते हैं। धूप-अगरबत्ती की जाती है। बीकानेर के पुनास गांव के लोगों ने तो सांड की मृत्यु पर उसकी समाधि बनाई और चौतरफा वृक्ष लगाये। नाथद्वारा में तो एकबार एक सांड की शव-यात्रा निकाल कर उसे दो बोरी नमक के साथ दफनाया गया। उदयपुर के श्मशान में सती की चबूतरी के पास सांड की चबूतरी बनी हुई है।

कुत्तों की मृत्यु पर तो तालाब तथा छतरी तक बनाये गये हैं। जोधपुर में एक बणजारे ने अपने प्रिय पात्र रातिया नामक कुत्ते की यादगार में एक नाडा, तालाब व छतरी बनवाई। यही इलाका जब बस्ती में परिवर्तित हुआ तो उसका नामकरण ही रातिया तथा नाड़ा के सम्मिलित रूप में 'रतानाड़ा' हो गया जो आज भी इसी नाम से जाना जाता है। कहा जाता है कि यहां के बालसमंद उद्यान में जोधपुर के राजपरिवार के कुत्तों के कई स्मारक हैं। ये स्मारक इस परिवार के स्वामीभक्त कुत्ते टेनी, पिदगी, ब्यूटी, शायर, किवी, फार्म, काजी, चांग, मायल, मिसचीफ मेकर आदि के हैं।

जनवरी 1977 में नसीराबाद के सायरओली बाजार में शेरसिंह नामक कुत्ते की मृत्यु पर बैंडबाजों तथा फूल-गुलाल की उछाल के साथ शवयात्रा निकाली गई। पूरे बारह दिन तक उसका शोक मनाया गया। बारहवें दिन नगर के तमाम कुत्तों को गुल्लों (गुलगुलों तथा रसगुल्लों) का भोजन कराया गया। इस दिन खूब भजन-कीर्तन हुए। एक कूकरसिंह नामक कुत्ते को शेरसिंह का उत्तराधिकारी बनाया गया। फलस्वरूप उसके पगड़ी बंधाई की रस्म पूरी की गई। रात को अच्छी रोशनी की गई। इस अवसर पर कुत्ते की यादगार को बनाए रखने के लिए फोटो तक खींचवाए गए। उदयपुर के गुलाबबाग में कुतिया की स्मृति में किसी महारानी की बनाई हुई छतरी है।

बन्दर को हनुमान का रूप माना जाता है। इसकी मृत्यु पर तो सजी-सजाई डोल निकाली जाती है जिसमें बन्दर को बैठा हुआ रखा जाता है। कई जगह रात्रि जागरण तथा हवन आदि किये जाते हैं। समाधि देने पर चबूतरा बनाया जाता है और दाह-संस्कार कर चंदन, नारियल दिये जाते हैं। रेवाड़ी के चौक बाजार में हनुमानजी की मूर्ति के चरणों में शरीर छोड़ने वाले बन्दर को जगनगेट के पास वाले ठठेरों के बगीचों में समाधिस्थ किया गया। कुचेरा में तो एक बन्दर की विद्युत करंट से मृत्यु होने पर उसकी डोल निकाली गई। कहते हैं, मरते वक्त उसके मुंह से 'राम' शब्द सुनाई दिया। इस बन्दर को यहां से लीराई ले जाया गया और किसी तरह उसकी यादगार बनाये रखने के लिए एक समिति का निर्माण किया गया जिसने 'करंट बालाजी' के नाम से एक मंदिर का निर्माण किया।

सांपों की मृत्यु पर भी इसी तरह के विचित्र क्रियाकर्म किये जाते हैं। जैसलमेर में तो सांप को कफन देकर समाधिस्थ करते हैं। भवानी मंडी के निवासी रामप्रताप तेली ने तो अपने कुए पर रह रहे सर्पराज की मृत्यु होने पर उसे चंदन का दाग दिया और विधिवत क्रियाकर्म करने के उपरांत उसके अवशेष लेकर हरिद्वार की यात्रा की और गंगाजी में उसकी अस्थियां प्रवाहित की।

जानवरों के प्रति मनुष्य का यह प्रेम और ममत्व यह सिद्ध करता है कि गुणों की पूजा का प्रत्येक प्राणी अधिकारी है चाहे वह जानवर ही क्यों न हो। महाराणा प्रताप का प्यारा साथी चेटक भी प्रताप की ही तरह अमर हो गया। हल्दीघाटी के मैदान में बनी उसकी समाधि प्रताप के प्रति उसकी स्वामीभक्ति और शौर्य वीरत्व के कई इतिहास पृष्ठ खोल देती है।

मुगल बादशाह अकबर को एक हथिनी बहुत प्रिय थी जिस पर बैठकर वे शिकार को जाया करते थे। इस हथिनी ने कई बार बादशाह की रक्षा की। जब वह मर गई तो बादशाह ने फतहपुर सीकरी में इसकी स्मृति में एक मीनार बनवाई जो 'हिरण मीनार' के नाम से प्रसिद्ध है।

बीकानेर के महाराजा अनूपसिंह के स्मारक के पास मोरों का स्मारक भी अपने में बड़ी दिलचस्प घटना लिये है। कहते हैं जब महाराजा अनूपसिंह की मृत्यु के बाद उनका दाह संस्कार किया जा रहा था तो पास ही के एक वृक्ष से एक-एक करके कई मोर कूद कर चिता में जल मरे। लोग जब उन्हें बचाने लगे तो कहते हैं, चिता से आवाज गूंजी-'इन्हें मत बचाओ, जलने दो। ये महाराजा के ही पिछले जन्म के राज परिवार के सदस्य हैं। जलने से ही इनकी सद्गति होगी।' तब इनका भी वहां पास में स्मारक बनाया गया।

तमिलनाडु के रामनाथपुरम जिले की पहाड़ी के शिखर पर एक हाथी के दांत का स्मारक बना हुआ है। कहते हैं, पहाड़ी पर बने शिव मन्दिर में प्रतिदिन एक हाथी आया करता था जिसके एक ही दांत था। जब वह मर गया तो शिव-भक्तों ने उसका एक स्मारक बनाकर उस दांत की भी वहीं स्थापना कर दी।

हमारे देश में ही नहीं, विदेशों में भी ऐसी घटनाएं हुई हैं। अमेरिका के एक गांव में एकबार पकी फसल पर भयानक टिड्डी दल उमड़ पड़ा। लोगबाग बहुत परेशान हो गये। उसी समय देव योग से चीलों का समूह आ पड़ा जिसने टिड्डी दल का खत्मा कर दिया। इस पर गांव वालों ने चीलों का एहसान माना और एक स्मारक बना दिया। यह बात 150 वर्ष पुरानी कही जाती है।

रोम में एक बार रात्रि को टाइवर नदी में बाढ़ आ गई। इसकी सूचना मुर्गों ने बांग देकर लोगों को दी। लोग जाग गए और अपना कीमती सामान आदि ले सुरक्षित हो गए। रोमवासी मुर्गों की इस बात से बड़े प्रभावित हुए और उन्होंने उनकी स्मृति में नदी पर एक पुल बनवा दिया। सच तो यह है कि पशुओं के बिना मनुष्य अपना जीवन सूना मानता है। मनुष्य की यदि कोई मजबूरी नहीं हो तो कोई मनुष्य ऐसा नहीं मिलेगा जो अपने साथ कोई न कोई जानवर नहीं रखना चाहेगा।

दीवाली पर दवात पूजन

दीवाली से नया वर्ष शुरू हो जाता है। अत: व्यापारी अपनी बहियां बदल देते हैं। नये रूप में खाते-पानड़े शुरू करने के लिए दीवाली को लक्ष्मी-पूजन के साथ नई बही का पूजन भी किया जाता है। बही खोलते ही प्रारम्भ में कुंकुम का सातिया मांडा जाता है। दवात में पुरानी स्याही की जगह नई स्याही भरने के लिए उसे भीतर-बाहर से पीली, लाल अथवा ईंटी मिट्टी से खूब रगड़ा जाकर आक के पत्तों से चमकाया जाता है। दवात पीतल की विविध तरह की होती है। लिखने के लिए बरू की नई कलम तैयार की जाती है।

दवात की स्याही सामान्य स्याही नहीं होकर विशेष रूप से तैयार की जाती है। जिन घरों में लक्ष्मी-पूजन, बही-पूजन होता, वहां महीने- पन्द्रह दिन पूर्व से स्याही तैयार करने का उपक्रम प्रारम्भ कर दिया जाता। यह स्याही साल भर वैसी ही चमक दिये रहती। देशी-पद्धति से स्याही तैयार करने में बड़ी मेहनत लगती। इसकी कई दिनों तक घुटाई की जाती।

यह स्याही काली होती जो शुभ मानी जाती और इसके लिखे अक्षर वर्षों तक वैसी ही चमक लिये रहते। इसमें सर्वाधिक तो काजल ही काम आता। काजल के लिए एक बड़ा मिट्टी का दीपक जलाया जाता। उसकी लौ से काजल प्राप्त करने के लिए उस पर एक दूसरा दीपक औंधा रख दिया जाता जिससे काजल तैयार होता रहता। स्याही के अनुपात को देखते जितना काजल जरूरी होता उतना प्राप्त होने तक दीपक जलता रहता। दीपक को दीवाण्या कहते। रूई को हथेली में लम्बी फैला दूसरे हाथ से बंटी देते बत्ती यानी वाट तैयार करते।

काजल के साथ निश्चित मात्रा में सादा पानी, धावड़ी गूंद का पानी, गर्म लाख का पानी, लीला थोथा एवं अन्य चीजें मिलाकर प्रतिदिन घुटाई की जाती। यह स्याही स्वाभाविक तौर पर बाजारू स्याही से हर दृष्टि से अधिक गुणवत्ता लिये होती। इससे लिखावट भी स्पष्ट चमकदार तथा वर्षों तक बनी रहने वाली होती।

ऐसी स्याही अन्यों को भी वितरित की जाती। प्रत्येक गांव में ऐसे सेठ, साहूकार होते जो बड़ी मात्रा में स्याही तैयार कराते। अपने पिताश्री का साया उठने पर मैंने घर में तो लक्ष्मी-पूजन नहीं देखा किन्तु इतना याद है कि दीवाली के एक दिन पूर्व दवात की सफाई करने के बाद मैं उसे कभी गांव के सेठ चन्दनमलजी दक तो कभी हीरालालजी मुर्डिया की दुकान पर रख आता और दीवाली के दूसरे दिन वह दवात ले आता। उनकी पूजा में हमारी दवात भी रखी जाती। उसके लच्छा बान्धा जाता और पूरी स्याही से भर दी जाती। वर्ष भर उससे बहीड़ों, बहियों में मांग-तांग तथा हिसाब की खतनी खताते। पीतल की यह दवात 150-200 वर्ष पुरानी है। उससे भी बड़ा कलशनुमा गुंबजदार उसका ढक्कन है। वह दवात आज भी बड़े यत्न से मेरे पास सम्भाली हुई है। आंख में डालने का काजल तैयार करने के लिए घी का दीपक जलाकर उस पर उतरी मटकी की ठीकरी उल्टी पाड़ देते। रूई के साथ नीम के सफेद ताजे फूल मिलाकर बाती बनाई जाती। जो काजल पड़ता उसमें उचित मात्रा में घी मिलाकर उसे एकमेक कर दिया जाता। यह काजल मुख्यत: बच्चों की आंखों में लगाया जाता और इसी से उसके चेहरे-गाल-ललाट पर अंगुली से मामे लगाये जाते।

- म. भा.

शब्द रंजन

उदयपुर, गुरूवार 01 नवंबर 2018

सम्पादकीय

मधुर-मधुर मेरे दीपक जल

दीपावली हर बार आती है। इस सम्बन्धी लोकाचार तथा लोक तथा शिष्ट साहित्य एवं अन्य जितने अनुष्ठान और आस्थापरक अनुरंजन हैं वे ही बड़े अनुपम और अद्‌भुत हैं। भारत में इससे बड़ा विशाल त्यौहार दूसरा नहीं है।

यह त्यौहार किसी विशेष, विशिष्ट जन समाज या कि समूह का नहीं है पर यह जरूर है कि इसकी जो विविधताएं और विचित्रताएं देखने को मिलती हैं वे अचरज में डालने वाली हैं। यह भी कि जो त्यौहार एवं उत्सव पौराणिक मिथक से जुड़े हुए हैं उन्हीं का स्थायीत्व एवं जनाधार भी है।

इस त्यौहार से जुड़े कई मिथक ऐसे भी हैं जो हमारी स्मृतियों में सुनते-सुनते कैद हैं। वे अलौकिक हैं इसलिए अदृश्य और रहस्यमय ही हैं। इसमें चित्तौड़ के किले पर लगने वाला भूतों का दीवाली का मेला तथा बैकुण्ठ चतुर्दशी पर दिव्यात्माओं का मेला है।

यों जो दृश्यवान है वह भी अपने में अदृश्य का अध्यात्म लिये है। प्रकाश दीवाली का मुख्य देय है। माटी का छोटा सा दीया मधुर-मधुर प्रकाश देता है। हम उसी से प्रकाशित होकर जीवनानंदी बनते हैं। बाहरी रोशनी की चकाचौंध आत्म प्रकाश नहीं देती।

अब कलियुग है। कल-युग है। इस युग में कई तरह का घना अन्धेरा व्याप्त हो गया है इसीलिए कवि ने ठीक ही कहा-

अभी हमारे मन में गहन अंधेरा है
केवल दीप जला देने से क्या होता है।

शब्द रंजन के लेखकों, सुधी पाठकों, शुभेच्छुओं और सहयोगियों को दीपावली पर हार्दिक शुभकामनाएं।

पत्र-पिटारी

शब्द रंजन का अंक 19 आरम्भ से अन्त तक देखा, पढ़ा और जाना। 'सूली पर सेज डाले राजनट गोरधन' लेख आज अचम्भा लगता है। ऐसे कलाकारों का संरक्षण एवं संवर्द्धन आवश्यक है। गवरी का आलेख पढ़ा, मन भरा नहीं। आज गवरी के कई पौराणिक खेल लुप्त हो रहे हैं, इन्हें पुन: रमत में लाने का प्रयत्न चाहिये। देवनारायण पड़ की पहचान कई नई जानकारियां दे गई। पड़ कला को उल्लेखित कर इसे जिन्दा रखने का प्रयास सराहनीय ही नहीं, अपितु ज्ञानवर्धक भी है। शब्द रंजन दिन-प्रतिदिन पठनीय तथा ज्ञानवर्धक होता जा रहा है। बधाई।

- पुरुषोत्तम 'पल्लव', उदयपुर

लच्छमी आजै मन भावणी

-पुरुषोत्तम 'पल्लव '

थोड़ो टेम काढ़ ने आ जाजै,
अर आखाई घर में छा जाजै, मन भावणी।
अरे अेक दाण थूं आजै लच्छमी पामणी।।

(1)

थारे खातर घर धोळाऊं पीळी लींपू आंगणां,
कोरा काढ़ ने भांत-भांत रा आंगण मांडू मांडणा,
थारा पगल्या आय बणा जाजै,
अर म्हारी आस पूरा जाजै, मन भावणी।
अरे अेक दाण....।।

(2)

धूप दीप नैवेद चढ़ाऊं, हरस मनाऊं भारी,
बाट नाळता निजरियां थाकी रातां बीती सारी,
अरे म्हने आय वतळा जाजै,
अर माथा पै हाथ धरा जाजै, मन भावणी।
अरे अेक दाण....।।

(3)

फूल री जग्यां पांखड़ी थूं मान करी ने मानजै,
दूजो मत मान म्हने थारो ही टाबर जाणजै,
आय टाबर ने संभाळ जै,
अर याने थूं रूखाळ जै, मन भावणी।
अरे अेक दाण....।।

(4)

थारी घणै मान मनवार करूं मां वेळांछती आवजै,
जगा पाळक जगदीश नारायण ने भी लारां लावजै,
राजी मन सब रै आजै,
धन दौलत रा भण्डार भराजै, मन भावणी।
अरे अेक दाण....।।

संस्कृति संरक्षण की चुनौतियों पर मंथन जरूरी

मैं जहां भी जाता हूं, सर्वत्र विद्वानों में यही सुनने को मिलता है कि संस्कृति का क्षरण हो रहा है। मूल्यों का विघटन हो रहा है। समय रहते इनका संरक्षण होना चाहिये। सवाल यह अधिक महत्वपूर्ण है कि यह संरक्षण कौन, कैसे और किस तरह करे। यह बात दूरदर्शन चंडीगढ़ के पूर्व निदेशक डॉ. के. के. रत्तू ने शब्द रंजन कार्यालय में संस्कृतिविद् डॉ. महेन्द्र भानावत से एक भेंट के दौरान कही।

जवाब में डॉ. महेन्द्र भानावत ने सन् 1972 तथा 76 में उनके संयोजन में भारतीय लोककला मण्डल में आयोजित लोककला संगोष्ठियों का जिक्र करते बताया कि तब भी विद्वानों में यह विषय चिंतन का मुख्य विषय बना था। विद्वानों में डॉ. कपिला वात्स्यायन, देवीलाल सामर, कोमल कोठारी, जगदीशचन्द्र माथुर जैसे अनुभवी, पारखी एवं सिद्धहस्त विद्वान थे। उन्होंने निष्कर्ष दिया वह था कि आज की बदलती हुई जीवन व्यवस्था में संस्कृति का क्या रूप हो? क्या यह संस्कृति अपने पारंपरिक परिवेश में जीवित रह सकेगी? यदि इसमें परिवर्तन-परिवर्धन करना हो तो किस सीमा तक हो? यह परिवर्तन कलाकार स्वयं करे या और कोई दृष्टिवान पुरुष? क्या यह परिवर्तन थोपा हुआ नहीं लगेगा और क्या इसे दर्शक और प्रदर्शक एक मन से स्वीकार कर सकेगा?

डॉ. रत्तू ने कहा कि इसके लिए जरूरी है कि संस्कृतिधारक और संस्कृतिविचारक आपस में मिल-बैठकर चर्चा करें। इसके लिए जरूरी है कि हमारी सांस्कृतिक विरासत भी जीवित रहे और उसके समक्ष जो चुनौतियां हैं उनका भी समावेश हो। निष्कर्ष में दोनों ने स्वीकार किया कि यह रूप उस पौधे की तरह होगा जिस पर नई कलम लगाकर उसे समयोचित पुनर्नयापन दिया जाता है। चर्चा के अंत में डॉ. भानावत ने डॉ. रत्तू को लोककलाओं का आजादीकरण तथा आदिवासी लोक नामक अपनी कृतियां तथा शब्द रंजन के अंक भेंट किये। प्रारम्भ में डॉ. तुक्तक भानावत ने डॉ. रत्तू का भावभीना अभिनंदन किया।

हीर का भवाई देख दर्शक झूम उठे

उदयपुर के नगर निगम द्वारा आयोजित 29 अक्टूबर को दीपावली मेले में छह वर्षीय हीर सिसोदिया का भवाई नृत्य दर्शकों का सर्वाधिक आकर्षण का केन्द्र बना। हंसी-मुस्कराती गुड़िया-सी हीर ने अपने नौ मिनट के कार्यक्रम में कभी बोतलों पर पांव रख, कभी थाली की नोक पर डग भर, कभी पांवों के तले लोठों को चलायमान कर, कभी नुकीली कीलों पर, कभी दोनों हाथों में चकरी की तरह थाली घुमा तो कभी कांच के टुकड़ों पर फुदक कर जो नृत्य प्रस्तुति दी उसे देख सभी दंग रह गये। क्या बच्चे और अन्य सभी अपना दिल थामे टकटकी लगाये एक टक हीर को ही हृदयासीन करते पाये गये।

हीर की प्रशिक्षिका शाकुन्तलम संस्थान की संस्थापिका शकुन्तला पंवार ने बताया कि हीर एक ऐसी होनहार बालिका है जो जन्म से ही नृत्य-कला का घूंट पीकर आई है। उसके अंग-अंग में जादुई लोच के कारण ही इस छोटी-सी उम्र में मात्र डेढ़-दो वर्ष में इतनी पारंगत बन गई कि राजस्थान के अलावा अन्य प्रान्तों में भी ऐसी दक्ष कुशाग्र बालिका कहीं देखने को नहीं मिली।

शकुन्तला ने बताया कि सबसे उम्दा, शानदार तथा सर्वोत्कृष्ट तो हीर का भवाई नृत्य है। इस नृत्य में अपने सिर पर वह पीतल का बड़ा घड़ा, चरू रखकर उस पर एक के ऊपर एक कर चूड़ीदार माटी के कलश रखती जाती है। यह संख्या दस तक, उसकी ऊंचाई से भी डेढ़ गुनी ऊंचाई लिए जब हीर मंच पर चौकड़ी भरती है तो दर्शक ठगे से रह जाते हैं। हीर का ही यह कमाल है कि अपनी लघु काय में भवाई को उसने ऐसा साध लिया है कि दोनों एक-दूसरे के पर्याय बन गये हैं।

उल्लेखनीय है कि हीर ने अपनी पहली प्रस्तुति जन्माष्टमी 2016 को उदयपुर के जगदीश मन्दिर में दी। उसके बाद चित्तौड़गढ, भीलवाड़ा में दी किन्तु सबसे बड़ी भोपाल में वहां की मधुबन संस्था के समारोह में दी। उदयपुर की यह प्रस्तुति उसके लिए सर्वाधिक दर्शकों के बीच की थी।

हीर की माता प्रिया प्रकाश ने बताया कि हीर ने जन्म से ही अपना अनूठा प्रभाव दिया फिर तो इसे गुरु-मां शकुन्तलाजी ने अपनी बेटी की तरह संवारा, तराशा और नृत्यकला में पारंगत किया। शाकुन्तलम उसके लिए तीर्थ-स्थल है। हीर ने बताया कि यहां जो कुछ उसे सीखने को मिलता है वह मीरां के शालिग्राम-सी एक ऐसी निधि है जिसे वह जीवनभर अपने साथ रखना चाहेगी।

हर दीपक देता संदेश

परिंडे का दीपक :
परणी का पगफेरा पाओ।
दूध-पूत से लाड़ लड़ाओ।।

पूजा का दीपक :
पगल्या-पगल्या लिछमी आवे।
भरापूरा परिवार सुहावे।।

देहरी का दीपक :
मन उजियारा, तन उजियारा।
भीतर बाहर, सब उजियारा।।

खजाने का दीपक :
अकूत अलूट अखूट खजाना।
किन्तु रहे सबसे अनजाना।।

रोड़ी का दीपक :
रंक रईस बराबर साथी।
कृष्ण-सुदामा से संगाती।।

नदी का दीपक :
मिटे पाप दुष्कर्म, बढ़े तो भाईचारा।
कल-कल छल-छल बहे, नीर निर्मल बन धारा।।

हेंडपंप का दीपक :
सभी हाथ पुरुषार्थ पयोधर।
बहे पसीना पानी घर-घर।।

हाई-वे का दीपक :
आतंकी बलात्कारी अरु घोटालेबाज।
सूली ऊपर सेज रचाने की उन पर हो गाज।।

सीमा का दीपक :
जिनकी नहीं मिशाल, जलती उनकी रहे मशाल।
शत-शत करें सलाम, तिलक दें उनके उन्नत भाल।।

अखंड दीपक :
प्रतिदिन ही सूरज स्वर्णिम हो।
बारह मास महा मधुरिम हो।

श्मशान का दीपक :
सभी मृत्यु अमरत्व प्राप्ति हो।
सुजस सुमन सुवास व्याप्ति हो।।

सर्वकामना का दीपक :
चार खूंट चौईस नगारे, तीन लोक सा न्यारा।
ऐसा हिंद बने हिंदी का, विजयी विश्व सितारा।।

स्मृतियों के शिखर (62) : डॉ. महेन्द्र भानावत

लोकगीतों की विरासती रंगत लिये नारायणीदेवी

पीछोला के किनारे उदयपुर के राजप्रासादों से सटा नाव घाट केवल नावों का शरणगाह ही नहीं अपितु एक पूरी की पूरी बस्ती का बसेरा लिये है। यह बस्ती परम्पराशील गाने-बजाने वाले कलाकारों से आबाद है। नारायणीदेवी ने यहीं सन् 1931 में जन्म लिया।

विविध घाटों का पानी नहीं पीकर इस एक ही घाट का पानी पीकर कई ऐसी गायिकाएं यहां हुईं जिनके गीत राजमहलों की प्राचीर में निरन्तर गूंज देते रहे। वार-त्यौहार ही नहीं, विशिष्ट अवसरों पर भी राजदरबार में यहां की गायिकाओं ने अपने कोकिल कण्ठों से राजदरबार को ही नहीं, बाहर से आने वाले शाही मेहमानों तथा मेवाड़ एवं अन्य रियासतों के ठाकुरों, उमरावों, सरदारों को भी अपनी गायकी की मिठास तथा मेवाड़ी मुजरे-मनुहारदारी से मोहित किया।

महाराणा की सेवा में रहकर यहां की गायिकाओं ने विविध प्रसंगों के सैकड़ों गीतों को अपने कण्ठ पर उतारे हैं। जन्म से लेकर अनेकानेक संस्कारों से जुड़े एवं अवसर विशेष से गीतों में गर्भ के बारह मास के, जन्म के, जलमा पूजन के, छठी के, नामकरण संस्कार के, विवाह के, शिकार के, रूठने-मनाने के, युद्ध के लिए प्रस्थान के, विजयश्री प्राप्त करने के, शैय्या के, मनोरथ के, पोढ़ने के, जगने के, विरह के, मिलन के, ओलूं के, देवी-देवताओं के, सन्देशा भेजने के, पूरवज के, रातिजगा के, देव-दर्शन के, सुपना के, पंखेरू के, मौत-मरण के ; अनेकानेक ऐसे प्रसंग हैं जिनसे जुड़े सैकड़ों, हजारों, संख्यातीत, असंख्यक गीतों की लड़ियां कभी रिक्त नहीं रहीं। कमजोर नहीं पड़ीं।

ऐसे राणाजी के पीछोला का पानी और उदयपुर का वास कौन नहीं चाहेगा! इसके आगे सारे जवाहरात व्यर्थ हैं। कभी लता मंगेशकर भी इस भौम से मोहित हुई थी और उन्होंने गया था-

राणाजी म्हैं तो कईय न मांगूं
हीरा न मांगूं मोती न मांगूं
न मांगूं नवसर हार
पीछोला रो पाणी मांगूं उदियापुर रो वास।

इसी गीत की सर्वप्रथम रेकार्ड भराई थी महाराणा भूपालसिंहजी ने। गायिका थी लच्छुबाई। मैंने लच्छुबाई से भेंटकर मेवाड़ी गीतों की अनेक रंगतों में अपनी गायकी की मोहनी मिठास देती अनेक रंगतें सुनी थीं।

नारायणीदेवी को यह सब राग-रंग विरासत में मिला। छोटी उम्र से ही अपनी मां के साथ लय, ताल, ठेका, ठुमका सीख कर सब गीतों की गायकी पकड़ली। हर समय वही धुन। वही गायकी। वही रटन। वही रचन और प्रदर्शन से हौंसला बढ़ता गया। हिया खुलता गया। अपनी बड़ी बहिन तुलसीबाई के साथ कण्ठ-से-कण्ठ मिलाकर गाती तो गीतों की मिठास द्विगुणित हो जाती। लोग सुनकर दंग रह जाते। दूर रहते हुए भी कान उस गायकी को हाजिर नाजिर कर एक सम्मोहन में बंधकर खींचे आते।

ऐसा करते-करते दोनों गायिकाएं तुलसी-नारायणी के रूप में अपनी प्रभा फैलाने लगीं। सन् 1958 में जब आकाशवाणी का जयपुर केन्द्र खुला तो दोनों बहिनों को सार्वजनिक होने का श्रेष्ठ मंच मिला। यहां का प्रसारण इतना प्रभावी बना कि भोपाल, इन्दौर, जोधपुर, बीकानेर के केन्द्रों से भी फरमाइश आने लगी। दिल्ली आकाशवाणी केन्द्र ने भी इनका खूब प्रसारण किया। विविध भारती पर भी इनका डंका बजने लगा।

इसी वर्ष प्रसिद्ध नृत्यकार भगवानदास की नृत्य मण्डली ने नारायणीदेवी को गायिका के रूप में रख कर बड़ी ख्याति अर्जित की। दूसरे ही वर्ष मीरां कला मन्दिर में नारायणीदेवी को मुख्य गायिका का अवसर मिला लेकिन स्थायीत्व मिला विश्व प्रसिद्ध संस्थान भारतीय लोककला मण्डल में। वहां के संस्थापक देवीलाल सामर स्वयं एक जाने-माने लोक कलाकार तथा पारम्परिक कला-संस्कृति के साधनामूलक समर्पित एक ऐसे सधेसधाये कला-पारखी थे जिनके साथ गाने-बजाने तथा नृत्य करने वाले होनहार कलाकारों तथा कलानेत्रियों का सशक्त दल था। यहां नारायणीदेवी ने सन् 1960 से लेकर 35 वर्षों तक अपनी गायिका के श्रेष्ठत्व से देश के कोने-कोने तथा विदेश में दिये गये कई प्रदर्शनों में अपनी निराली पहचान बनाई।

यों आकाशवाणी के प्रसारणों द्वारा तो नारायणीदेवी लगभग सभी मुख्य केन्द्रों पर गाई-बजती रही। इससे श्रोताओं की फरमाइश-दर-फरमाइश बढ़ने लगी। नारायणीदेवी बताती हैं कि उनके द्वारा गाये गये लोकगीतों में (1) हलो ए मलो सखी बागां में चालां (2) गुलाबी साड़ी गोरा सा मुखड़ा पे प्यारी लागे (3) चूड़ो बण्यो मृगानैणी जी रे हाथ पोंचो तो लचकाय करे (4) खमा कर राखूं बाई थारा श्याम ने (5) आओजी भंवर अलबेला प्यारीजी रा म्हेलां आवोजी (6) मिरगानैणी जी पधारे रंग म्हेल में जैसे गीत सुन श्रोता झूमने लग जाते।

जब सूचना एवं प्रसारण मंत्री बी. वी. केसकर भारतीय लोककला मण्डल आये तो सबसे पहले नारायणीदेवी से मिले। कहा कि इनके गाये गीतों की श्रोताओं द्वारा बड़ी संख्या में फरमाइश पाकर देश के आकाशवाणी केन्द्रों की लोकप्रियता में भी चार चांद लगे हैं। यही नहीं, उन्होंने एक समारोह में प्रसन्नतामूलक गर्व की अनुभूति करते,

नारायणीदेवी की गायकी से आकाशवाणी केन्द्रों ने भी बड़ी सोहरत पाई, कहकर श्रेष्ठ लोकगीत गायिका के रूप में पुरस्कृत भी किया।

कलामण्डल में रहकर नारायणीदेवी ने देश के कोने-कोने में लोकगीतों की सुवास दी। ट्यूनिसिया, लीबिया, केरो, टॉटा, अलेक्सेण्ड्रिया, पेरिस, बगदाद, बेबीलोन, कुवैत, ईरान, सिक्कीम, भूटान तथा नेपाल के अनेक शहरों को राजस्थानी लोकगीतों की मधुरिमा का स्वाद दिया। वहां की ऐसी अनेक दिलचस्प घटनाएं उनकी अविस्मरणीय यादों का मनोरम खदान बना हुआ है।

ट्यूनिसिया में आयोजित लोकगीतों के अन्तर्राष्ट्रीय समारोह में नारायणीदेवी और उनकी गायकी इस परवान पर चढ़ी कि सैकड़ों कलाकारों की आंखों की तारिका बन गई। इसी गायकी की कर्णप्रिय बुलन्दी से कलामण्डल का दल विश्व प्रतियोगियों में श्रेष्ठत्व को प्राप्त कर सका।

सन् 1965 में रूमानिया की राजधानी बुखारेस्ट में आयोजित पंचम अन्तर्राष्ट्रीय कठपुतली समारोह में भारतीय प्रतिनिधि के रूप में जब कलामण्डल के चार सदस्यों का दल गया तो पारम्परिक अमरसिंह राठौड़ के कठपुतली खेल की पुनर्नये रूप में 'मुगल दरबार' नाम से नव्य-भव्य प्रस्तुति दी। इस खेल के सभी गीतों में नारायणीदेवी का कण्ठ-स्वर मुखरित था। वहां इस छोटे से मात्र 32 कठपुतलियों के खेल ने जो कमाल दिखाया वह अन्य राष्ट्रों के चालीस-चालीस कलाकारों द्वारा भी सम्भव प्रतीत नहीं हुआ जो अपने साथ पूरे ट्रक भर सामान से लकदक थे। चिड़िया जैसी चहक के बीच संगीत और धागे का जादू जो प्रभाव दे पाया उसके कारण ही इस खेल को सर्वश्रेष्ठ घोषित कर सर्वोत्तम सर्वोच्च पुरस्कार प्रदान किया गया।

नारायणदेवी बताती हैं कि गेंद नचाने वाली बादशाह की रंडी गुलबदन नाच दिखाती हुई अपने हावभावों के साथ जब यह गीत छेड़ती है तो पूरी महफिल का रंग उस पर न्यौछावर हो जाता है। यह कमाल गुलबदन की अदा से भी अधिक उसके गीत के स्वर-सौंदर्य का है। नारायणीदेवी उसी भाव में अपने को रसमग्न कर गाने लगती है-

सैंया तोरी गोदी में गेंदा बन जाऊंगी
राजा तोरी गोदी में गेंदा बन जाऊंगी
गेंदा बन जाऊंगी हजारी बन जाऊंगी.... सैंया
जब मोरे सैंया को प्यास लगत है
गंगा जमुना नरमदा बन जाऊंगी।। सैंया....
जब मोरे सैंया को भूख लगत है
लड्डू जलेबी कचोरी बन जाऊंगी।। सैंया....
जब मोरे सैंया को सोने को चाहिए
सोड़ पतरना रजइया बन जाऊंगी।। सैंया....
जब मोरे सैंया को शौक लगत है
तबला सारंगी सितार बन जाऊंगी।। सैंया....

ऐसा ही नृत्य बीकानेर की मालन का होता है। मंच पर अपनी मरोड़ देती काठ की बेजान पुतली क्या-क्या गुल खिलाती है जब वह गीत की लहरी में लहर-लहर हो गाती है-

तरकारी ले लो, मैं हूं मालनिया बीकानेर की
आलक बेचूं, पालक बेचूं और बेचूं चंदरोई
बड़ा सेठ की पगड़ी बेचूं, मैं मालण की जाई।। तरकारी....
गाजर का गड़ कोट बणाया, मूळी का दरवाजा
सकरकंद की तोप बणाई, लड़े फिरंगी राजा।। तरकारी....
हाट गई बाजार गई मैं, लेने गई धनिया
धनिया धनिया क्या करूं, मेरे पीछे पड़ गया बनिया।। तरकारी....
एक पैसे का धनिया लाई, एक पैसे की मरची
मरची-मरची क्या करो रे मुझे कोई न देवे खरची।। तरकारी....

खेल देखने वाले पुतली द्वारा दिखाये जाने वाले खेल पर ही लट्टू नहीं होते, गीत के बोल के अनुसार उसके द्वारा प्रदर्शित नृत्य में भी पुतली के साथ स्वयं पुतली बन विभोर हो जाते।

कलामण्डल का जो सर्वश्रेष्ठ योगदान नारायणीदेवी के साथ रहा, उसकी प्रसिद्धि का सारा श्रेय वह उसके संस्थापक-संचालक कला-गुरु देवीलाल सामर को देती है। यहां रहकर उसने सारी दुनियां देख ली जो अच्छे-अच्छे नहीं देख सकते। कलामण्डल के नृत्यों के साथ-साथ वहां की नृत्य-नाटिकाओं में भी नारायणीदेवी की मुख्य गायकी पचासों प्रकार की संस्थाओं, क्लबों, अकादमियों और विश्व-ख्यात समारोहों में धूम मचाने में कामयाब रही जो उनके लिए सर्वथा अकल्पनीय ही है।

राजस्थानी लोकगीतों की अनेक खूबियां हैं। इन खूबियों को अलग-अलग अंचलों की गायिकाओं ने संवारा है और अपना नाम रोशन किया है। बीकानेर की अल्लाजिलाईबाई का 'केसरिया बालम आवोनी पधारो म्हारे देश' नामक माण्ड गीत तो राजस्थान का पर्यटन-प्रमुख गीत बनकर पूरे विश्व के पर्यटकों को हेला देकर रंगों के इस प्रदेश में आमंत्रित कर रहा है।

ऐसे राजस्थान के गीतों के वैशिष्ट्य के बारे में मैंने कभी लिखा था- 'इन गीतों के सहारे न जाने कितनी उजाड़ और उलझी बस्तियों का जीवन खरबूजी-तरबूजी हुआ है। छाती पर विरह-शिला के गुरुतर भार को लेकर न जाने कितनी विरहिणियों ने कुरजां, तोते, मोर, बगुले, कौए, तीतर, हंस, पपीहे और फुदकती चिड़ियों के साथ अटावन देकर तिल-तिल सन्देश पहुंचाये हैं।

नवोढ़ा वधुओं ने यौवन की देहरी में प्रवेश पाते हुए अंगड़ाइयों की लेखनी से न जाने कितनी रितु-पातियां लिखी हैं। युवतियों ने न जाने कितनी बार इन्हें अपने कल-कण्ठों पर गाकर 'सरस राग रति रंग' की पिचकारियां छोड़ी हैं तो वृद्धाओं ने न जाने कितनी बार इन्हें अपने बैठे हुए गालों और गढ़ी हुई आंखों में लाकर झुर्रियों का इतिहास देखा है।

यही नहीं, बालक-बालिकाओं ने खेल-मेल में न जाने कितने गुड्डे-गुड्डियों के ब्याह रचाये और काली रातों को उजेला है। अंधेरी चांदनी के उठाऊ डेरों के साथ क्रीड़ाएं की हैं और ल्होड़ी सौत-बड़ी सौत जैसे अखूट खेल खेलकर न जाने कितनी बार हुर्रे-हुर्रे किये हैं। प्रेमी-प्रेमिकाओं की कस-कांचली को जिंदा बनाये रखने में जहां एक ओर इन गीतों ने पारसियों का पंच मेला लगा छुपे रूस्तम की तरह उनका लव लगाये रखा वहां दूसरी ओर बहुतों ने इनकी आड़ लेकर अपना उल्लू सीधा करने में भी कोई कसर नहीं रखी।'

यह कम उपलब्धि नहीं है कि जगह-जगह टेलीविजन केन्द्रों, आकाशवाणी केन्द्रों तथा संगीत संस्थाओं में नारायणीदेवी के गाये दो सौ-तीन सौ गीतों की रेकार्डिंग की गई। लगभग पांच सौ गीतों ने उनके कण्ठ पर आसीन हो कण्ठी बंधाई करी। उनके गाये गीतों के साथ उनके द्वारा बजाये हारमोनियम के अलावा नगाड़ा, ढोलक, तबला, सारंगी, तानपुरा, मजीरा, बांसुरी, जलतरंग, क्लारनेट, रावणहत्था जैसे वाद्यों ने संगत दी।

हारमोनियम के साथ मांड, ओल्यूं, हिचकी गीत गाने में उनका कोई सानी नहीं। कलामण्डल की नृत्य-नाटिकाओं में पणिहारी, म्हाने चाकर राखोजी, मूमल महेन्द्र, इन्द्रपूजा जिसने भी देखी वह अभी भी नारायणीदेवी की गायकी का कायल बना हुआ है।

नारायणीदेवी की उम्र की उतारू बादली अभी भी बरस रही है। वह यदाकदा जगदीश मन्दिर जाती है। भगवान जगदीश को रिझाने में अन्यों के साथ अपने संगत-स्वरों की बुलन्द प्रभा दिये दमकती है। यह उम्र किसी की हो, देवाराधना की शरण में जो भी लुळलुळ होता लगता है, उसका जीवन सार्थक हुआ संतोषी बना रहता है। नारायणीदेवी देवी नारायणी की चरण-शरण लिए कण्ठ-घट में 'जय जगदीश हरे' की रटन-रफ्तार लिये जीने की कला बनी हुई है। सच तो यह है कि नारायणीदेवी के कण्ठ पर विरह गीत बड़ी खूबी लिए करुणिक होते हैं।

कलामण्डल के प्रदर्शन विभाग में रही मुख्य अभिनेत्री शकुन्तला पंवार ने बताया भी कि नारायणी जीजी एक अकेली ऐसी गायिका रही जिसने न केवल नृत्यों में अपितु नृत्यनाटिकाओं तथा कठपुतली खेलों में भी अपना प्रमुख स्वर दिया। उनके इसी स्वर की कशिश के कारण पणिहारी से लेकर मूमल-महेन्द्र, म्हाने चाकर राखोजी, ढोला-मारू जैसी सभी नृत्यनाटिकाओं में मुख्य नायिका की मेरी विरहिणी भूमिकाएं दर्शकों में सर्वाधिक सराही गईं।

जीजी की यह विशेषता रही कि वे हारमोनियम भी बजाती। गीत भी गाती और आवश्यकतानुसार स्त्री-स्वर-संवाद भी करती। कठपुतली खेल में नर्तकी 'सैंया बेदरदी दरदियो न जाय' गीत पर जब अपनी थिरकन देती तो जीजी की गायकी की झंकार पूरे वातावरण को झंकृत कर देती।

नारायणीदेवी के सेवानिवृत्त होने के बाद न वे नृत्यनाटिकाएं रहीं और न कठपुतली की वह नर्तकी ही। उनके बाद कोई भी उनकी जगह नहीं ले सका।

नई वैश्विक चुनौतियों के लिए तैयार है पेपर उद्योग : बासू

- जेके पेपर चैनल पार्ट्नर्स का क्षमतावर्धन कार्यक्रम-

उदयपुर। हमारे देश का पेपर उद्योग इन दिनों कई वैश्विक चुनौतियों का सामना कर रहा है जिनके कारण मांग और पूर्ति में अंतर आ गया है।

इसके कुछ प्रमुख कारण विदेशों से आयात में कमी, डॉलर के मुकाबले रूपए की कीमतों का गिरना और एक्सपोर्ट का बढ़ना आदि हैं।

इससे घरेलू खपत के मुकाबले पेपर उत्पादन व आपूर्ति पहले की भांति सरलता और तरलता से नहीं हो पा रही है। इन चुनौतियों के बीच जेके पेपर इंडस्ट्रीज मजबूत रिसोर्सेज व दक्ष व्यापारिक रणनीतियों के चलते बड़े से लेकर हर छोटे स्तर तक अपनी उपस्थित दर्ज करवा रहा है। ये विचार पुष्कर में जेके पेपर्स लिमिटेड की ओर से आयोजित दो दिवसीय चैनल पार्ट्नर्स के क्षमतावर्धन कार्यक्रम में चीफ जनरल मैनेजर सेल्स एंड मार्केटिंग सैकत बासू ने व्यक्त किए।

बासू ने कहा कि जिस दर से विकास दर बढ़ रही है, उसी दर से पेपर उद्योग भी नई ऊंचाइयों को छू रहा है। भारत में साक्षरता व विकास दर बढ़ने के साथ ही इंटरनेट साक्षरता और जागरूकता भी बढ़ रही है। कहा यह जा रहा है कि डिजिटलाइजेशन का असर पेपर इंडस्ट्री पर होगा मगर मार्केट रिसर्च बताती है कि देश में पेपर इंडस्ट्री, खासतौर पर राइटिंग और प्रिंटिंग पेपर में 6 से 7 प्रतिशत की ग्रोथ होगी व यह उन्नति के नए शिखर पर विराजमान होगी।

दो दिन तक विभिन्न सत्रों में क्षमतावर्धन, उद्योग व मानव प्रबंधन, विक्रय कला, तकनीकी उन्नयन आदि पर विभिन्न सत्रों में वैचारिक मंथन हुआ।

दूसरे सत्र में डिप्टी जनरल मैनेजर मार्केटिंग (टेक्निकल सर्विसेज) बी. दास ने जेके पेपर इंडस्ट्री के विभिन्न उत्पादों की तकनीकी जानकारी साझा करते हुए कहा कि जेके पेपर्स ने हमेशा प्रदूषण, पर्यावरणयी परिस्थितियों तथा आने वाले समय की मांग व चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए बरसों पहले ही कई दूरगामी प्रयास शुरू कर दिए थे। हम पेपर बनाने के लिए एक पेड़ काटते हैं तो बदले में पांच पेड़ लगाते हैं।

बरसों से चली आ रही इस व्यवस्था ने आज हमें उस मुकाम पर ला खड़ा किया है जहां हम बाजार को लीड कर रहे हैं। हम सार्वजनिक रूप से उपलब्ध पेड़ों को नहीं काटते बल्कि अपनी ओर से संचित की गई पेड़ों की हरित निधि का उपयोग करते हैं। हमारा यह मॉडल पूरे विश्व में सराहा और अनुसरित किया जा रहा है।

डीजीएम एचआर अभिषेक कुमार ने कहा कि अब हमें पेपर उद्योग में छोटे कस्बों व गांवों में अपनी सशक्त उपस्थित दर्ज करवानी है तथा व्यापारिक रिश्तों को और अधिक बेहतर बनाते हुए सतत सफलता का लक्ष्य प्राप्त करना है। उदयपुर के पार्श्वकल्ला पेपर्स के डॉ. तुक्तक भानावत ने बताया कि क्षमतावर्धन कार्यक्रम में प्रतिभागियों को जेके पेपर उद्योग के विविध आयामों के साथ ही पेपर निर्माण और विपणन की प्रकिया और इससे जुड़े कई नए वैज्ञानिक व तकनीकी पक्षों के बारे में भी जानकारी दी गई।

उद्योग के व्यावहारिक पहलुओं पर सवाल-जवाब सत्र में चिंतन हुआ। इस अवसर पर जयपुर से राजस्थान पेपसेल्स प्रा. लि. के श्यामसुंदर डागा, श्री एंटरप्राइजेज से आशीष डालमिया, बालाजी पेपर एजेंसी से अरूण मिश्रा, ब्यावर मंगल पेपर्स से सुशील मंगल, बीकानेर सेल्स कॉरपोरेशन से मोहन पुंगलिया, जोधपुर कामधेनू मार्केटिंग से अजय गोयल, उदयपुर से पार्श्वकल्ला पेपर्स के डॉ. तुक्तक भानावत, जैन भंडारी एंड कम्पनी से चंद्र भण्डारी, जोनल मैनेजर नोर्थ विवेक अब्रोल एवं डिप्टी मैनेजर नार्थ उमेश कत्याल भी उपस्थित थे।

आईजीआई की 24 ज्वैलर्स से भागीदारी

उदयपुर। जेम प्रमाणन और मूल्यांकन संस्थान इंटरनेशनल जेमोलॉजिकल इंस्टीट्यूट (आईजीआई) ने उपभोक्ताओं से इस उत्सव के मौसम में केवल प्रमाणित प्राकृतिक हीरे खरीदने के लिए आग्रह किया है। आईजीआई ने नवरात्रि, दशहरा, दुर्गा अष्टमी, एकादशी, शरद पूर्णिमा, करवा चौथ, धनतेरस और दीवाली जैसे त्योहारों के लिए 5 नवंबर तक अभियान 'एक बिलियन साल प्राचीन डायमंड के मालिक बनिए' के लिए 24 शहरों में कई प्रमुख ज्वैलर्स से भागीदारी की है।

आईजीआई-इंडिया के प्रबंध निदेशक तहमास्प प्रिंटर ने कहा कि प्राकृतिक डायमंड, हीरे, रत्न और आभूषण ग्रेडिंग में वैश्विक प्राधिकरण आईजीआई भरोसे और आत्मविश्वास का प्रतीक है। आईजीआई रिपोर्ट और सर्टिफिकेट यह सत्यापित करते हैं कि जो हीरा ग्राहक घर ले जा रहे हैं, वह कम से कम एक अरब साल पुराना है।

एस्टन मार्टिन की नई वैन्टेज

उदयपुर। एस्टन मार्टिन के एक आइकॉनिक मॉडल और दिल की धड़कन के रूप में सात दशक का सफरय खालिस स्पोर्ट्स कारों के अद्भुत खानदान का बोध कराने वाले नाम की क्रांतिकारी अभिव्यक्ति ने एस्टन मार्टिन नई दिल्ली में जोरदार आगमन किया। इसकी कीमत 2.86 करोड़ रूपये (एक्स शोरूम) है।

वर्ष 1951 में पहली बार डीबी2 के लिए एक हाई आउटपुट इंजन विकल्प पर इस्तेमाल की गई वैन्टेज अपने स्वाभाविक हक के तौर पर जल्द ही एक मॉडल के रूप में स्थापित हो गई थी। इसकी हाइलाइट्स में विलियम टाउन द्वारा डिजाइन की गई वी8 वैन्टेज शानदार ट्विन-सुपरचार्ज्ड वी600 ले मैन्स और बहुत ज्यादा पसंद की गई वी8 वैन्टेज शामिल हैं। आज न्यू वैन्टेज पेश किए जाने के साथ यह दमदार स्पोर्टिंग डाइनस्टी नई ऊंचाइयों को छूने के लिए तैयार है। एस्टन मार्टिन दक्षिण और दक्षिणपूर्व एशिया की सेल्स ऑपरेशंस प्रमुख नैंसी चेन ने कहा कि हमारे सेकंड सेंचुरी प्लान के अंतर्गत सात वर्षों में सात नए मॉडल में से वैन्टेज दूसरा नया मॉडल है। यह (सेकंड सेंचुरी प्लान) एक बोल्ड योजना है और यह कारगर है।

जगुआर एफ-पेस इनजीनियम लॉन्च

उदयपुर। जगुआर लैंड रोवर इंडिया ने जगुआर की पहली परफॉर्मेंस एसयूवी, एफ-पेस के पेट्रोल डेरिवेटिव का स्थानीय उत्पादन आरंभ करने की घोषणा की। प्रेस्टिज डेरिवेटिव में उपलब्ध और 2.0 लीटर 4-सिलेंडर, 184 केडब्लू टर्बोचार्ज्ड इनजीनियम पेट्रोल इंजन से पावर्ड, स्थानीय रूप से निर्मित मॉडल ईयर 2019 एफ-पेस की कीमत 63.17 लाख रूपये (भारत में एक्स-शोरूम कीमत) है। जगुआर लैंड रोवर लि. (जेएलआरआईएल) के प्रेसिडेंट और प्रबंध निदेशक रोहित सूरी ने कहा कि भारत में अपने लॉन्च के बाद से दो वर्षों में, जगुआर एफ-पेस ने जगुआर फैंस और पारखी ग्राहकों की कल्पना को पूरा किया है। एफ-पेस के स्थानीय रूप से निर्मित इनजीनियम पेट्रोल डेरिवेटिव के साथ, पहले जगुआर एसयूवी की अपील और अधिक बढ़ गई है। जगुआर एफ-पेस को दक्षता, प्रतिक्रियाशीलता और परिष्करण प्रदान करने के लिए डिजाइन एवं निर्मित किया गया है।

सेवा परमोधर्म ट्रस्ट ने दी स्कूल फीस

उदयपुर। आर्थिक रूप से कमजोर स्कूल फीस चुकाने में असमर्थ उदयपुर की हिमानी

विश्वकर्मा की सेवा परमो धर्म ट्रस्ट ने आर्थिक मदद की है। हिमानी एक निजी विद्यालय की प्रतिभाशाली छात्रा है। हिमानी ने 10वीं की परीक्षा 83 प्रतिशत अंकों के साथ उतीर्ण की। इसके पिता दिलीप सिंह का कुछ समय पूर्व निधन हो गया था और घर को चलाने की सारी जिम्मेदारी मां पर आ पड़ी जो एक मैस में कार्यरत है। पिता के असामयिक निधन से आर्थिक दृष्टि से परिवार पिछड़ गया। हिमानी की आगे की पढ़ाई पर प्रश्न चिन्ह लग गया। तभी किसी ने सेवा परमोधर्म ट्रस्ट से मदद लेने की सलाह दी। इस पर मां-बेटी ट्रस्ट के अध्यक्ष प्रशांत अग्रवाल से मिली। इस पर श्री अग्रवाल ने 19,300 रुपये स्कूल फीस प्रदान की। हिमानी खुश है कि उसका सपना टूटने से बच गया और वह आगे की पढ़ाई जारी रख सकेगी।

लक्स गोल्डन रोज अवार्ड्स की सराहना

उदयपुर। सिनेमा स्क्रीन पर भारतीय महिला कलाकारों के सुंदर और अतुलनीय प्रदर्शन का जश्न मनान के उद्देश्य से लक्स गोल्डन रोज अवॉर्डस के कॉन्सेप्ट को एक ओरिजनल कॉन्सेप्ट के रूप में लिया गया था। अपने तीसरे संस्करण में लक्स ने एक कदम आगे बढ़ाकर संयुक्त राष्ट्र को 'हीफोरसी' आंदोलन के लिए अपना समर्थन दिया है। वर्ष 2014 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा लॉन्च किया गया 'हीफोरसी' आंदोलन, एक वैश्विक पहल है, जो पुरुषों के लिए एक निमंत्रण है कि वे मूक दर्शक के रूप में न रहें, बल्कि ऐसे सक्रिय समर्थक बनें जो बेहतर और मजबूत समाज बनाने के लिए महिलाओं के साथ मिलकर काम करें। संदीप कोहली, सीसीवीपी ब्यूटी एंड पर्सनल केयर, यूनिलीवर ने बताया कि लक्स पिछले 90 वर्षों से सौंदर्य का जश्न मना रहा है। हमारा बॉलीवुड के साथ लंबा रिश्ता है। जिन मुद्दों से महिलाओं को इतने लंबे समय तक निपटना पड़ा है, आज उन पर उचित ध्यान देने के साथ हम मानते हैं कि 'हीफोरसी' आंदोलन के लिए अपने समर्थन को विस्तार देना बेहद जरूरी है।

स्लोवाकिया में उत्पादन संयंत्र शुरू

उदयपुर। जगुआर लैंड रोवर ने स्लोवाकिया के नित्रा में 1.4 बिलियन यूरो (एक अरब पाउंड) का अत्याधुनिक उत्पादन संयंत्र खोला है। इस संयंत्र के उद्घाटन के साथ ही यूके की किसी ऑटोमोटिव कंपनी ने पहली बार स्लोवाकिया में कोई उत्पादन केन्द्र खोला है। प्रो. डॉ. राल्फ स्पेथ ने कहा कि जगुआर लैंड रोवर का व्यवसाय केन्द्र यूके है, लेकिन नित्रा में नया कारखाना कंपनी की वैश्विक विस्तार रणनीति का हिस्सा है, जिसके तहत वर्ष 2014 में चीन में एक संयुक्त उपक्रम और वर्ष 2016 में ब्राजील में एक संयंत्र की स्थापना की गई थी, साथ ही वर्ष 2011 में भारत और वर्ष 2017 में ऑस्ट्रिया से ठेके पर उत्पादन शुरू किया गया था। इस नये अंतर्राष्ट्रीय कारखानों के निर्माण से जगुआर लैंड रोवर अपने ग्राहकों के लिये अधिक रोमांचक नये मॉडल्स की पेशकश कर सकेगा, मुद्रा के उतार-चढ़ाव से सुरक्षा करेगा और वैश्विक रूप से प्रतिस्पर्द्धी व्यवसाय को सहयोग देगा। उन्होंने कहा कि वर्तमान में जगुआर लैंड रोवर ने नित्रा में लगभग 1500 लोगों को रोजगार दिया है।

बोकारो में दिव्यांग सहायता शिविर

उदयपुर। नारायण सेवा संस्थान एवं आदित्य फ्लोर मिल्स प्रा.लि के संयुक्त तत्वावधान में बोकारो (झारखण्ड) में जन्मजात पोलियो करेक्टिव सर्जरी के लिए निशुल्क जांच, चयन एवं जरुरतमंद दिव्यांगों को सहायक उपकरण वितरण शिविर आयोजित किया गया।

उद्घाटन मुख्य अतिथि क्षेत्रीय विधायक बिरंची नारायण ने किया। शिविर में 158 दिव्यांगों का पंजीयन हुआ। इनमें से पी एण्ड ओ डॉ. तपश पी बेहरा ने परीक्षण कर 31 दिव्यांगों का ऑपरेशन के लिए चयन किया। पांच दिव्यांगों को व्हील चेयर, 15 को ट्राईसाइकिल और 25 को बैसाखी की जोड़ियां प्रदान की गई। शिविर प्रभारी हरि प्रसाद लढ्ढा ने अतिथियों का स्वागत किया।

दीवाळी रे काज.....

(पृष्ठ एक का शेष)

लड़कियां समूह रूप में इस घुड़ले को सिर पर लिये गीतों के साथ नाचती रहती हैं। गृस्वामिनियां इस घुड़ले को तेल पूरती हैं और पैसे देती हैं। यह घुड़ला भी हमारे लोकजीवन का ऐतिहासिक प्रवाद बन गया है।

यह घुड़ला सिंध का मीर था जिसका नाम घुड़ेल खां था। प्रसिद्धि है कि संवत् 1548 में इसने मारवाड़ के पीपाड़ नामक गांव पर हमला कर वहां की बहुत सारी लड़कियों को पकड़ ले गया। तब मल्लूखां नामक अजमेर का सूबेदार था। उसने अपने सैनिकों के साथ घुड़ेलखां पर हमला कर तीरों से उसका सिर छेद डाला और अपहरण की हुई बालिकाओं को मुक्त कर उन्हें घुड़ेलखां का तीरों से छिन्नभिन्न किया सिर भी भेंट किया। यही सिर मटकी के प्रतीक रूप में लड़कियां अपने सिर पर लिये नाचती हैं। घुड़ेलखां का प्रतीक यह घुड़ला असत है और इसमें प्रज्वलित दीप सत है। यह दीपोत्सव असत पर सत की विजय का हास-उल्लास है।

मारवाड़ का यह घुड़ला मेवाड़ में घड़ल्या बन नाचा गाया जाने लगा। यहां घड़ल्या बड़ा लाड़ला बन सबके परिवार में सेंतमेंत हो गया। यहां इसकी कीमत सात सुपारी और एक रूपया है। गीतों में घड़ल्या लड़कियों को उतना ही प्रिय है जितनी प्रिय किसी महिला के लिये सजी सिणगारी पुत्र-वधू होती है।

रमझम करती बण्यारी आई
के वे बण्यारी घड़ल्या को मोल
सात सुपारी रिपियो रोक
दा पड़ै तो ले बाई, नीतर उत्तर दे बाई
थारो बेटो परण पधार्‌यो
लाख रिप्या री लाड़ी लायो
लाड़ी करै सिणगारो, घड़ल्यो मारो लाड़लो।

बालक-बालिकाएं समूह रूप में दीवाली के गीत गाती हुई घर-घर दीवाली का संदेश सुनाती हैं। बालिकाओं द्वारा गाये जाने वाले गीतों को घड़ल्यो नाम से संबोधित करते हैं। इधर मेवाड़ में घड़ल्ये से संबंधित अन्य धारणा और मिथक प्रचलित हैं।

घड़ल्या रे घड़ल्या कठे चाल्यो
चाल्यो ए बाई पीली के खाने
खोदी खोदी नु गुणा में नाकी
लींपी चूंपी ने चाकर चणायो

बालिकाएं प्राय: अपने घरों की सफाई लींपापोती हेतु सुबह बहुत जल्दी अथवा संध्या को भोजन करने के बाद अपने सिर पर टोकरियां ले-लेकर पीली लाने के लिए खानों पर जाती हैं। घड़ल्या नामक कुम्हार का लड़का भी एक दिन जब अपने गधे को साथ लिये पीली लेने जा रहा था तब रास्ते में एक लड़की के पूछने पर उसने बताया कि पीली लाकर अपने घर को स्वच्छ एवं साफ सुथरा बनाऊंगा और दीवाली का त्यौहार मनाऊंगी।

वह घड़ल्या सभी लड़कियों के लिए अजीब खिलौने एवं हंसी मजाक का विषय बन गया। आज तक लड़कियों ने घड़ल्या जैसा अजीब नाम नहीं सुना नहीं था, धीरे-धीरे यही गीत दीवाली के गीतों के साथ लड़कियों ने गाना प्रारंभ कर दिया। शनै:-शनै: दूसरे गीत तो प्राय: लुप्त से होते गये और यह घड़ल्या ही गीत बन कर आज तक सभी के कलकंठों में गूंजता रहा।

बालिकाओं की मनोभावनाएं :

लड़कियां गीत गाते समय अपने साथ एक मिट्‌टी की कलशी ले जाती हैं जिसके चारों ओर छोटे-छोटे छिद्र होते हैं और जिसमें एक नन्हा सा दीपक जलता रहता है। इसी को घड़ल्या कहा जाता है। घड़ल्ये का मोल पूछने पर लड़कियां उत्तर देती हैं-

रमझम करती बण्यारी आई
के वे बण्यारी घड़ल्या को मोल
सात सुपारी रूपयो रोक
दाव पड़े तो दे बाई नीतर उत्तर दे बाई
थारो बेटो परण पधार्‌यो
लाख रीपा की लाड़ी लायो
लाड़ी करे सिणगारो घड़ल्यो म्हारो लाड़लो।

एक अन्य गीत में लड़कियां अपने पिता से 'बड़े घर परणावो जी' कह कर अपनी आंतरिक मनोभावना जिस खूबी से व्यक्त करती है, वह सुनते ही बनती है-

गाड़ा नीचे चमला बाया, ऊगा छोटा-मोटा जी
बाप म्हारा बावजी बड़े घर परणावोजी
बड़ा घरां का ताकड़ी तोला, सेर सोनो तोलांजी
सेर सोना की म्हारे आयल-पायल रूपा का झांझरियाजी
ओढ़ पेर ने पाणी चालां, राणाजी बखाणेजी।
रावजी रा घुड़ल्या छूटा, ठमके पायल टूटीजी
लादी व्है तो दीजो देवर, म्हूं थाणी भोजाईजी!
लोड़्यो देवर पीसे पोवे, जेठ भरेगा पाणीजी,

बड़े घर में ब्याहने पर सोने के समस्त आभूषणों से सारा शरीर ही जैसे सोना बन जाएगा। अच्छे ओढ़ पहिन कर जब पानी लेने पनघट पर जाऊंगी तो राणाजी मुझे बखानेंगे। खेलकूद में जब मेरी पायल टूट जायेगी तो देवरजी से पायल ढूंढ लाने को कहूंगी। छोटा देवर पीसने-पोने में मेरी मदद करेगा। जेठजी कभी-कभी पानी की मटकी भर ले आयेंगे। नन्हीं-नन्हीं बालिकाओं की इस प्रकार की सुखी पारिवारिक जीवन की कल्पना कितनी स्वाभाविक एवं सराहनीय है।

छोटी-छोटी लड़कियां अपनी कल्पनाशक्ति से न जाने कैसे-कैसे कहानी-किस्से बना लेती हैं, इसकी हम कल्पना तक नहीं कर सकते। उनकी सृजन-क्षमता का कोई आंक नहीं लगा पाया। घड़ल्ये से जुड़ा एक दास्तान बड़ा ही मनोरंजक है।

एक दीवाली जबकि लड़कियां घड़ल्या गा रही थी, एक जरा से आपसी वैमनस्य के कारण एक अन्य लड़की उसके हाथ से वह घड़ल्या छीनकर भाग गई। रास्ते में उसके पांव में कांटा चुभ गया, बात बढ़ गई। कांटा बुरी तरह दर्द करने लग गया तब ताई के वहां कांटा निकलवाने गई। देवजी ने संतोष एवं धीरज के साथ उसे पानफूल खाने को दिये। देवजी ने कांटा निकलवाकर जब वह घर जा रही थी तो रास्ते में मगरी का पुत्र जो स्वभाव से ही चंचल था, मिल गया और उसके हाथ से पानफूल छीनकर खा गया। यह शिकायत लेकर जब वह मगरी के पास गई तो मगरी को अत्यंत गुस्सा आया और उसके जोर-जोर से सात लातें लगाईं। मगरी का बेटा बिचारा गुड़िन्दे खाता-खाता अपने होश-हवास ही भूल गया।

परणी की रूठी अभिव्यक्ति :

कुछ दिन बाद घड़ल्या गाने वाली सातों सहेलियों की शादी हो गई। सभी अपने-अपने ससुराल चली गई। बहुत समय बाद जब वे पुन: दीवाली के त्यौहार पर मिलीं तो उनमें से एक ने अपनी सहेली की साड़ी के पल्लू में छोटी सी चूहिया बांध दी। बिचारी चूहिया जोर से चिल्लाने लगी तब उसकी साथिनों ने अपने-अपने हाथों में मूसल लेकर उसके साथ हंसी मजाक करना प्रारंभ कर दिया। एक अजीब तमाशा सा हो गया। बात बहुत बढ़ गई। बढ़ती-बढ़ती उसकी सुसराल तक जा पहुंची। सुसराल में सास ने उसे बहुत डांट-फटकार सुनाई। पति ने भी उसके साथ कम नहीं बिताई।

इस पर पत्नी नाराज हो गई और 'एलो थांरा छोरा-छोरी' कहकर अपने पीहर की ओर चलती बनी। पति से रहा न गया। वह उसे ढूंढ़ने निकला। गांव के चौराहे पर बैठे पटेल से उसने पूछा। पटेल के उसका रंग-रूप पूछने पर उसने बताया कि वह लम्बी-सी, कुछ पतली-सी, हाथ में लाख का लाल चूड़ला पहने है। पटेल ने कहा - पास ही वह जो वट वृक्ष है उसकी खोखल में बैठी विश्राम कर रही है।

घड़ल्यो म्हारो लाड़लो सैर में भाग्यो जायरे भाई
सैर में लागो कांटलो ताई के घरे जाय रे भाई
ताई दीधी नीसणी देवजी के घरे जाय रे भाई
देवजी दीधा पान फूल मगरी बेटो खायरे भाई
मगरी दीधी लात की सात गुड़िन्दा खायरे भाई
सातां मेली गोरड़ी सातां रे राता पागारे भाई
पल्ले बांधी ऊंदरी स्यूं-स्यूं करती जायरे भाई
हाथे बांध्यो मूसलो धम-धम करतो जायरे भाई
लूंमा केरी लाकड़ी ने घणी-घणी कूटी ओ राज
कूटी तो थोड़ी ने खेंची घणी
डेरी में लाई डचोकी ओ राज
ए लो थारां छोरा-छोरी
म्हें म्हारे पीहर जास्यां ओ राज
गाम पटेलां भाईला म्हारो गोरी ने जाता देखी ओ राज
कसी थारी गोरड़ी ने कस्यो गोरी को रूप ओ राज
लांबी गोरी पातली ने हाथ गलाल्यो चूड़लो राज
देखी थी भाई देखी थी बड़ला की खोखल देखी थी।

इस प्रकार किशोर-किशोरियों में दीवाली नई उमंग, नया जोश एवं नया जीवन लेकर आती है। उनके साथ नाचती-गाती, हंसती-खेलती एवं सोती-जागती है।

हीड़, हरणी और सल्ला सायजादी :

लड़कों में यह दीवाली हीड़ गीतों के रूप में लमछराई मिलती है। यह हीड़ मिट्‌टी का बना एक बड़ा दीपक होता है जिसमें कपास-बीज कपासिया रख तेल से तर कर दिये जाते हैं। इस हीड़ को गन्ने से बांध दिया जाता है और उसकी लम्बी डांडी हाथ में पकड़ ली जाती है। इसमें गन्ने के छोटे-छोटे गट्‌ठे तथा चणबोर डाले जाते हैं। मारवाड़ में काचर, बोर, मतीरों का अधिकाधिक उपयोग किया जाता है। इसीलिए उधर कहावत चल पड़ी- 'दीयाळी रा दीया दीठा, काचर बोर मतीरा मीठा।'

यह हीड़ पितरों को प्रकाश भी देती है। उन्हें यथास्थान पहुंचाने में उनकी राह को आलोकित करती है। कहते हैं श्राद्ध पक्ष में जब समग्र पितर-देव धरती पर चले आते हैं तो वे इतना अधिक खा-पी लेते हैं कि यहीं सो जाते हैं। यह हीड़ उन्हें जगाकर उनके घर का रास्ता बताती हुई उन्हें यथास्थान पहुंचाती है। इस हीड़ को लड़के घर-घर हीड़ाते हैं। गीत गाते हैं। तेल इकट्‌ठा करते हैं और धानचून तथा पैसा आदि पाते हैं।

अत्यंत दुबली-पतली हरणी को देखकर जब उससे यह प्रश्न किया गया कि बहिन हरणी तू इतनी दुबली क्यों हो गई हो? यदि तुम्हारा कोई सहारा नहीं है तो तुम मेरे मामे के घर चलो वहां तुम्हें मैं अच्छे कट्‌ठे गेहूं की बनी घूघरी खिलाऊंगा। बस यही बात गीत बन गई और न जाने कब से, जब-जब दीवाली आती है बालक-बालिकाओं के कंठों से स्वत: ही अपनी मधुर राग में निकल पड़ती है-

हरणी हरणी थूं क्यूं दूबली ए चाल म्हारे देस
मामे रांधी घुघरीए, धोली तली को तैल
धोरे-धोरे केवड़ो रे क्यारे-क्यारे फूल! सल्ला...
ऊंडी-ऊंडी बावड़ी रे मांय भंवर की बेल
पाणी वाली पातली रे चेवड़ो ढीलो मेल! सल्ला...

दीवाली के दिन दीवाली के स्वागतार्थ लड़के अपने हाथों में माटी की बनी हीड़ लेकर घर-घर में हीड़ हींचने जाते हैं। इस हीड़ में एक मिट्‌टी का दीप जलता है।

हीड़ हींचो, पया मेलो, तैल पूरो
गायां रे घूघरा, भैंस्यां रे रमझोळा!
आज दीवाली काले खेंकरो।

हीड़ गीत गाकर पैसे एकत्रित करते रहते हैं। अन्य दिनों की तरह आज के दिन वे जौ-ज्वार आदि न लेकर केवल पैसे ही लेते हैं। साथ ही साथ आज दीवाली का त्यौहार, जिसकी बहुत दिनों से प्रतीक्षा की जा रही थी, आ गया है तथा कल खेंकरा (रामारामी अथवा गोवर्द्धन पूजा का दिन) है। इस बात की सूचना भी वे देते रहते हैं। दीवाली के दूसरे दिन भोर में भी-

साइलो माइलो छड़ी राम को रे निकल्यो हणुमान
लंका-लंका जाई जो रे देवता रा असवार

तथा 'आम्बा में तो में तूंबो रे' गीत गाकर दीवाली समाप्ति समारोह मनाते हैं।

इसी हीड़ के साथ हरणी और सल्ला सायजादी के उल्लेख वाले गीत भी बालकों में बड़े लोकप्रिय हैं। इन गीत कथानकों के संबंध में विशेष ज्ञातव्य नहीं मिलने पर इनका अध्ययन-अनुसंधान भी बड़ा रोचक और दिलचस्प हो सकता है। यह हीड़ जहां एक तरफ दीपक का सूचक है वहां दूसरी ओर विशिष्ट गीतों का सूचक भी है। यह हीड़ पुरुषों में भी प्रचलित है। तब प्रत्येक घर से मिठाई और नारियल देकर इन हीड़ गायकों को विदाई दी जाती है। कहीं-कहीं घरों में जितने पुरुष होते हैं उतनी हीड़ें जलाई जाती हैं। छोटों की ओर से बड़ों को हीड़ देने का रिवाज भी शुभ माना गया है। कहीं-कहीं हीड़ लाये व्यक्ति को तेल का पानी पिला कर चांदी का रूपया देकर विदा किया जाता है।

गोरधनजी और अन्नकूट :

दीवाली के दूसरे दिन खेंकरे पर प्रात: रात रहते-रहते औरतें अपने घर का कचरा थाली में ले बाहर डालने जाती हैं और आते वक्त 'दरीदर-दरीदर सगलो जाजो, म्हाणै घर में लिछमी आजो' कहते हुए चाबी से थाली बजाती हुई लौटती हैं साथ ही एक दीपक चौराहे पर और एक-एक दीपक पड़ोसियों के घर 'परस्या पाहुना' को सूचना देती हुई छोड़ आती हैं। 'परस्या पाहुना' भगवान पुरुषोत्तम के शुभागमन का संकेत है।

पल्ले की ओट में थाली द्वारा घर-घर छोड़ा यह दीपक प्रत्येक घर के ज्योतिर्मय जीवन की मंगल कामना का सूचक है। प्रेम, सुख, मंगल और पारिवारिकता का कितना ऊंचा भाव छिपा है इन दीपों में! इस दीवाली त्यौहार में! व्यक्ति इस दिन स्वयं अपना ही घर-परिवार प्रकाशित हुआ नहीं देखना चाहता अपितु चाहता है कि प्रत्येक घर-परिवार और यह अग-जग इस ज्योति से ज्योतित हो। व्यष्टि में समष्टि की कितनी उदात्त भावना छिपि है, वसुधैव कुटुम्बकम् के विस्तार को नापने वाले इस त्यौहार में!!

इसी दिन प्रात: गोबर के गोरधनजी बनाकर घर की देहरी पर पूजे जाते हैं। ये गोरधनजी जहां भूत-प्रेत के प्रतीक माने जाते हैं वहां खेतीहर भूमि के भी विश्वास हैं। गायों के भड़क जाने से खेत के फलै में सोये गोरधनजी गचर दिये गये तो उनकी स्मृति उनकी पूजा के रूप में स्थाईत्व ग्रहण कर गई। इन गोरधनजी की पूजा की जाती है और ल्होड़ी दीवाली तक ये देहरी के वहीं पड़े रहते हैं। संध्या-रात्रि को किसान धन-लिछमी के प्रतीक चौपायों को मेंहदी से सिणगारते हैं। उनके सींगों को भांति-भांति के रंग से रंगते हैं। उनके गलों में घूघरे तथा मोरपंख के बेड़े-छेड़े बांधते हैं। खासतौर से बैलों को एकत्रित कर लपसी, चावल, नारेल की धूप दी जाती है और हीड़ दीपों से उनकी आरती उतारी जाती है।

किसान इस मौके पर उनके धोक लगते हैं और उनकी यशगाथा हीड़ गाने को मचल पड़ते हैं। चौपे में इस दिन गायें खेंकरे खेलाई जाती हैं। भीलों में किसी सत्‌चरित्र भील की असामयिक मृत्यु हो जाने के कारण पत्थर पर उसकी प्रतिमा उत्कीर्ण कर 'गाता' के रूप में पूजन भी इसी दिन किया जाता है। नाथद्वारे के श्रीनाथजी मन्दिर का प्रख्यात अन्नकूट उत्सव भी एक महत्वपूर्ण प्रसंग है जो भीलों के ही लूटने का पारम्परिक पट्‌टा कहा जा सकता है।

मांडणों में महकते दीवाली के रंग

-डॉ. कहानी भानावत-

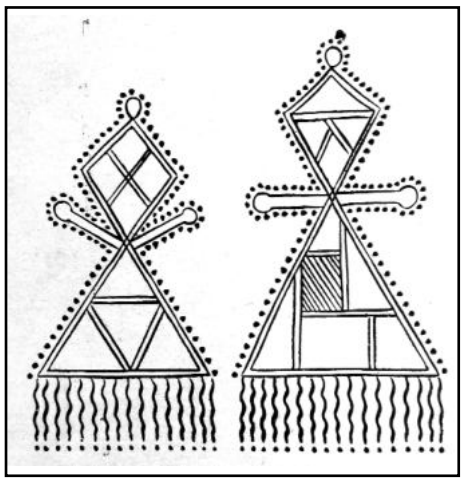

दीवाली दीयों का त्यौहार है। इस दिन असंख्य दीपक धरती को रोशन करते हैं।

अमावस्या की रात्रि प्रकाश से ऐसी जगमग हो उठती है जैसे आकाश असंख्य तारों से झिलमिलाता रहा है। दीवाली से पूर्व घर आंगन को कलात्मक रूप-सौंदर्य प्रदान करने वाले माण्डणें प्रकाश से मिल दीवाली को सद्‌गुणी बना देते हैं। घर-आंगन से लेकर देहरी-दीवाल तथा चौपाल और घर के

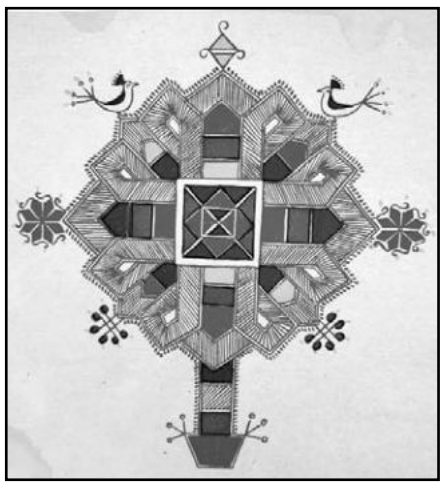

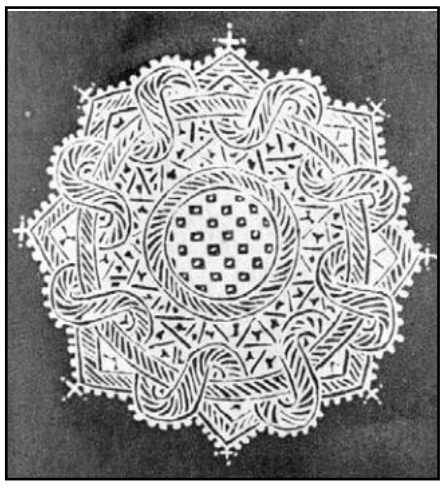

प्रत्येक कोने में गेरु भूमि पर खड़िया मिट्‌टी से तरह-तरह के माण्डणें ऐसे खिलखिलाते दृष्टिगोचर होते हैं जैसे नीली झील में श्वेत कमल टिमटिमा रहे हैं।

ये माण्डणें ऋद्धि-सिद्धि, स्वच्छता, सुन्दरता, सुख-समृद्धि तथा मंगल एवं सौभाग्य के प्रतीक कहे जाते हैं। इनमें बिन्दु, रेखाएं, कोण, वनस्पति और पक्षी जगत का भरा-पूरा परिवार समाहित होता है जो सृष्टि की समग्रता का द्योतक कहा जाता है। इनमें विशेष तौर से सौलह दीपक, चौक, पगल्ये, फूल, चौपड़, पान, फीणी, गलीचा, स्वस्तिक, जलेबी, गमला, दरवाजे के दोनों तरफ की दीवाल को सजाते कुंवल्ये, हीड़, बीजणी, कलश, जार, सुआ, मोर-मोरनी, गाय के खुर जैसे अनेक अंकन दीवाली के साक्षी होकर अगजग को खुशहाल बनाते हैं।

ये माण्डणें ज्ञान-विज्ञान, तन्त्र-मन्त्र, लोक-परलोक तथा चर-अचर सबको अपने में आत्मसात कर अंधकार पर प्रकाश, असत्य पर सत्य और मृत्यु पर अमरत्व की स्थापना के संवाहक होते हैं। धरती पर जो कुछ अभिमण्डित और मण्डनीय है वह सब माण्डणों में मण्डित कर महिलाएं लक्ष्मी, सरस्वती और उन सारे देवी-देवताओं का सान्निध्य प्राप्त करती हैं जो मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा के सहभागी बनते हैं।

दीवाली के देव प्रतीक

-शकुंतला पंवार-

लोकजीवन में साक्षात् देवता की बजाय उनके प्रतीक रूप में उनकी प्रतिकृति, छाया, छवि याकि असल-नकल बना पूजा-प्रतिष्ठा करने की परम्परा प्रचलित है।

इसके अन्तर्गत देव-स्थल चीरा-स्थल, मातर-लोक, गृह-स्थल, दीवाल पर या गले में धारण कर विशिष्ट अवसर, त्यौहार, उत्सव या फिर रात्रि जागरण, नवरात्रा जैसे अवसरों पर विशेष मान-मनौती एवं आस्था-श्रद्धापूर्वक उनका स्मरण किया जाता है।

इनमें दीवाली एक ऐसा पर्व है जब सर्वाधिक रूप में, सर्वत्र ही घर, आंगन, चौपाल, देहरी, दीवाल सबको विविधरूपा माण्डनों, अंकनों से सजाया जाता है। दीवाली से पूर्व ही गृह-लक्ष्मियां घर-आंगन की लींपाई-पुताई प्रारम्भ कर देती हैं। घर को साफ स्वच्छ एवं सफाईदार बनाकर रसोई, पूजा-स्थल, आंगन, द्वार, पटशाल-पशुठाण आदि पर लक्ष्मीजी के पगल्ये, दीपक तथा चौक जैसे भांति-भांति के मांडनांकन करती हैं।

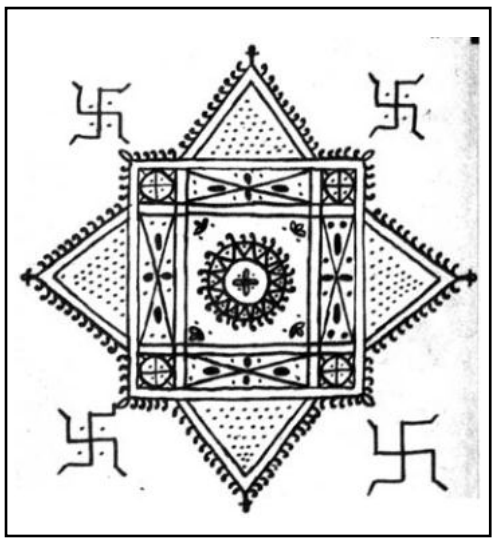

घर के प्रमुख स्थल दरवाजे से ही लक्ष्मीजी के चरण के रूप में पगल्ये बनाये जाते हैं। इनके साथ सिक्के भी ठेठ पूजा-स्थल तक बनाये जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि दीवाली की रात्रि को लक्ष्मीजी का पदार्पण होता है जो रिद्धि-सिद्धि, समद्धि और ऐश्वर्य प्रदान करती है। ऐसी कुछ कथाएं भी मिलती हैं जिनमें दरिदावस्था में जीवनयापन करने वालों पर लक्ष्मीजी महरबान अथवा टूटमान होकर आनंद ही आनंद कर देती है।

पूजा स्थल पर पगल्याजी के प्रमुख अंकन के साथ-साथ ऊपर ही ऊपर चांद-सूरज, ठेठ नीचे बाजोट तथा तथा थाली भरा मिष्ठान्न, पगल्याजी के ओरूं-दोरूं सातियाजी तथा नीचं दीपक बनाये जाते हैं। दीवाली के अंकन थापे कहलाते हैं जो अपेक्षाकृत स्थायी होते हैं। ये हिंगलू-सिंदूर या फिर हड़मची रंग के होते हैं।

दीवाली के बाद, दूसरे ही दिन अर्थात् कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा को मंदिरों तथा घरों में प्रात: गोवर्धन पूजा की जाती है। इसका सम्बन्ध भगवान कृष्ण से जुड़ा हुआ है। इसी दिन कृष्ण ने इन्द्र का मन दमन करने गोवर्धन पर्वत उठाकर ब्रजवासियों को संरक्षण प्रदान किया था। तरह-तरह की सामग्री से अन्नकूट भी इसी दिन किया जाकर गिरिराज की पूजा की जाती है। मुख्य द्वार पर गोवर्धनजी बनाये जाते हैं। कालान्तर में गोरधन पूजा से सम्बन्धित अन्य मिथक जुड़ गये।

समृद्धि सूचक यंत्रों की पूजा-अर्चना

-डॉ. तुक्तक भानावत-

मानव जीवन में यंत्रों का प्राचीनकाल से महत्व रहा है। ये यंत्र जीवन शुद्धि के प्रतीक रहे हैं। मनुष्य जीवन में कई तरह की लालसाएं अभिलाशाएं निरन्तर बनी रहती है। इनकी पूर्ति के लिए व्यक्ति कई तरह के प्रयत्न और पुरूषार्थ करता है। संतान प्राप्ति से लेकर धन प्राप्ति, ऋण मुक्ति, पदोन्नति और विदेश यात्रा जैसे कई प्रसंग निरन्तर छाया की तरह उसे घेरे रहते है तो दूसरी ओर नाना प्रकार के रोग, शोक, दुख और बाधाएं भी उसे जकड़े रहती हैं। इन सबसे निजात पाने के लिए यंत्र सर्वाधिक सशक्त एवं असरकारी माध्यम है। इन्हें बनाने तथा लिखने के लिए विशिष्ट प्रकार की साधनाओं एवं प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है।

संख्या में यंत्र अनगिनत है। कोई हिंगलू से लिखा जाता है तो कोई सिन्दूर से। कोई गेरू से लिखा जाता है तो कोई कुमकुम से। कोई पंच गंध, अष्ट गंध से लिखा जाता है तो कोई नारियल पर सोने-चांदी के वर्क पर ताम्र अथवा रजत पत्र पर यंत्र लिखकर पास में अथवा पूजा स्थान पर रखने से भी धन्य धान्य के साथ सुख शांति की वृद्धि होना माना जाता है। भोज पत्र अथवा कागज पर लिखे जाने वाले यंत्र मादलिए में बंद किए जाने से लेकर जेब में रखने, पगड़ी-टोपी मे रखने, बैइक अथवा गादी के नीचे रखने या चांदी के कलश में रखने पर फलदायी माने जाते है। गले और हाथों पर भी ये बांधे जाते हें। इन्हें सिद्ध करने की कई विधियां हैं। अनार, चमेली तथा सोने की कलम इन्हें लिखने में काम ली जाती है।

यंत्र मुख्यतया अंकों पर ही आधारित होते हैं। ये अपने प्रभाव को प्रत्येक दिशा में एक सा बनाए रखते है। इनका प्रयोगकर्ता सभी प्रकार के व्यसनों से मुक्त, शुद्ध, सात्विक, खान-पान एवं पवित्र आचार-विचार वाला होना आवश्यक है। यही कारण है कि पहुंचे हुए साधु, यति और साधक ही इनके प्रयोगकर्ता होते हैं। ये यंत्र बिसा, तिसा, चौतिसा से लेकर बावनिया, सित्तरिया, सौ, पांच सौ, हजार, दस हजार और एक लाख तक की संख्या लिए होते हैं। लाख की संख्या वाले यंत्र लक्षिया अथवा लखिया यंत्र कहलाते हैं। आयताकार, त्रिभुज से लेकर कई तरह के कलात्मक रूप, स्परूप में इन यंत्रों की शोभा देखते ही बनती है। इनमें दीवाली पर दरवाजे पर या फिर भीतरी और देवस्थान पर, दुकानों में नाना प्रकार के यंत्र लिखे जाने की सात्विक परंपरा देखने को मिलती है। इनका लक्ष्य मुख्यत: द्रव्य प्राप्ति और लक्ष्मी प्राप्ति रहता है। दीवाली के दिन मुख्यत: पंदरिया, बिसिया, चौतीसा, पैसठियां, अड़साठिया, बहतरिया तथा दो सौ यंत्रों की बहुलता देखने को मिलती है। यंत्र (चित्र नं. 1) को दीवाली के दिन अर्द्धरात्रि के समय सिन्दूर या हिंगलू से दुकान के बाहर लिखते हैं। यंत्र (चित्र नं. 2) को लक्ष्मी पूजा के दिन हल्दी से बहीखातों पर लिखते हैं। यंत्र (चित्र नं. 3) को अष्टगंध से लिखकर दीवाली के दिन रोहणी नक्षत्र में घड़े में, घर के भण्डार में रखा जाता है। यंत्र (चित्र नं. 4) को चमेली की कलम से अष्टगंध से लिख रेशम के कपड़े में रखा जाता है और व्यापार करते समय सदैव पास में रखा जाता है। यंत्र (चित्र नं. 5) को आम के पाटिये पर गुलाल छिड़क चमेली की कलम से एक सौ आठ बार गुलाल छांटते हुए अष्टगंध से भोज पत्र लिखते हैं। यंत्र (चित्र नं. 6) को स्वर्ण कलम से भोज पर लिखकर पास मे रखते हैं। उदयपुर में घूमने पर मण्डी, सूरजपोल तथा बड़ा बाजार इलाके में विभिन्न तरह के यंत्रों की बहुलता देखी गई जबकि बापू बाजार, चेतक सर्कल तथा अश्विनी बाजार जैसे क्षेत्रों में अपेक्षाकृत इनकी संख्या कम पाई गई। गांवों में प्रमुखत: जैन समाज की दुकानों में ये यंत्र मुख्यत: सिन्दूर में लिखे देखे गए।

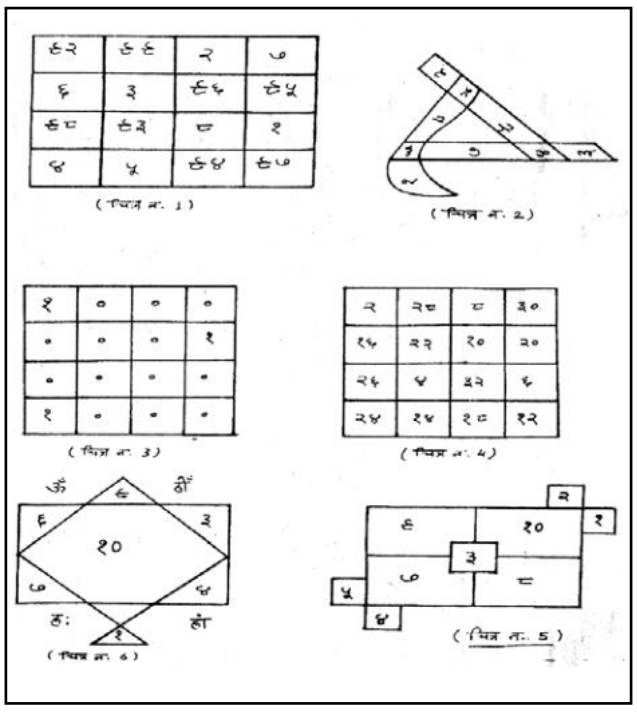

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक डॉ. तुक्तक भानावत द्वारा 352, कृष्णपुरा, सेंटपॉल स्कूल के पास, उदयपुर - 313001 (राज.) से प्रकाशित एवं मुद्रक लोकेश कुमार आचार्य द्वारा मैसर्स पुकार प्रिंटिंग प्रेस 311-ए, चित्रकूट नगर, भुवाणा, उदयपुर (राज.) से मुद्रित। सम्पादक : रंजना भानावत। फोन : 0294-2429291, मोबाइल - 9414165391, Email : shabdranjanudr@gmail.com, drtuktakbhanawat@gmail.com, सर्व विवादों का न्याय क्षेत्र उदयपुर होगा।